
चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र



ब्रह्मदत्त जब काशी का राजा था मद्र देश की राजकुमारी चन्द्रा देवी उनकी बडी रानी थी। विवाह के बाद बहुत वर्ष बीत गये। पर उनके यहाँ कोई सन्तान न हुयी। प्रजा ने जाकर राजा से कहा कि वे व्रत वगैरह करें ताकि उनके सन्तान हो और उन्हें युवराज मिले।

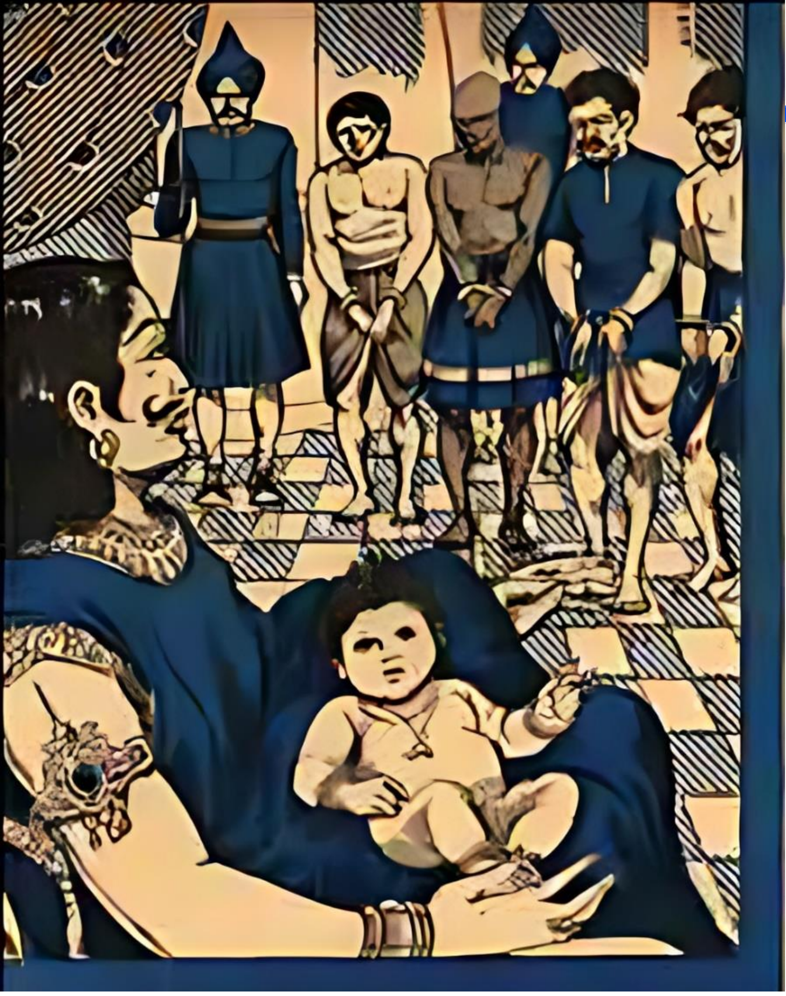
चन्द्रादेवी ने अनेक व्रत किये, पूर्णिमा के दिन उन्होंने उपवास रखा। उन्होंने सोचा-"अगर मैं शीलवती हूँ तो मुझे पुत्र-प्राप्ति हो।"

देवताओं के राजा इन्द्र ने उनकी इच्छा पूरी करने का निश्चय किया। और जब वे सोचने लगे कि किसको उनका पुत्र बनाकर भेजा जाये तो उन्हें बोधिसत्व याद आये।

पहले भी बोधिसत्व काशी के राजा के रूप में पैदा हुए थे। उन्होंने बीस वर्ष राज्य भी किया था। उस समय में उन्होंने कई पाप किये। उनके प्रायश्चित्त के लिये अस्सी हजार वर्ष नरक में काटने पड़े। फिर वे देवलोक में गये। वहाँ उनकी अवधि समाप्त हो रही थी और वे गन्धर्व लोक जाने की तैयारी कर रहे थे।

इन्द्र ने उस समय बोधिसत्व के पास जाकर कहा-"मित्र, यदि तुमने मानव लोक में फिर जन्म लिया तो तुम कई पुण्य तो कर ही सकोगे, और मानव जाति का उद्धार भी कर सकोगे। काशी के राजा की पत्नी चन्द्रादेवी पुत्र प्राप्ति के लिये कितने ही व्रत कर रही हैं। उनके लड़के के रूप में पैदा होओ।" बोधिसत्व इसके लिये मान गये।

बोधिसत्य के चन्द्रादेवी के गर्भ में प्रवेश करते ही, ठीक उसी समय



उनके पाँच सौ अनुचरों ने काशी राजा के अनुचरों की पत्नियों के गर्भ में प्रवेश किया।

यथा समय बोधिसत्व कई शुभ लक्षणों के साथ, चन्द्रादेवी के गर्भ से पैदा हुये। उसी समय बाकी पाँच सौ भी पैदा हुये। राजा ने आज्ञा दी कि उन सब का भी उसके लड़के के साथ पालन-पोषण हो।

अपने लड़के को दूध देने के लिए उसने चौसठ दासियों को नियुक्त किया। फिर उसने जाकर अपनी बड़ी रानी से कहा-"जो वर तुम चाहो, माँगो।"

उसने कहा-"जब समय आयेगा, तब माँगूँगी।"

पुत्र का नामकरण संस्कार किया गया। उसका नाम तेमिय रखा गया। उस समय राज पुरोहितों से पूछा गया-"क्या लड़के को कभी अशुभ होने की आशङ्का है?" उन्होंने लड़के को देख दाख कर कहा-"राजा। इस लड़के के बारे में किसी भय की जरूरत नहीं। यह चिरञ्जीवी है।"

जब तेमिय एक महीने का हुआ तो उसको सजा कर दरबार में, राजा के पास ले जाया गया। राजा अपने लड़के को गोदी में बिठाकर खिलाने लगा। उस समय चार चोरों को न्याय के लिए उनके सामने पेश किया गया। राजा ने उनके अपराध पर विचार किया। एक को उन्होंने हजार कोड़ों की सजा दी, दूसरे को आजीवन कारावास की सजा दी। तीसरे को भालों से मार देने के लिए कहा। और चौथे को फाँसी का दण्ड दिया।

बोधिसत्व को तो पूर्व जन्म का ज्ञान था ही। उन्होंने यह सब देखकर सोचा-"क्यों कि मेरे पिता राजा हैं, इसीलिये तो

वे ऐसे काम करके स्वयं नरक मोल ले रहे हैं। मैंने पहले बीस साल राज्य किया, और उसके बदले में अस्सी हजार वर्षों का नरकवास भुगता। फिर क्यों यों इसी चोर के वंश में पैदा हुआ हूँ। मेरे पिता बिना यह जाने कि वे स्वयं चोर हैं इन चारों चोरों को इतनी कड़ी सजा दे रहे हैं। यदि में राजा बन गया तो मुझे फिर नरक जाना पड़ेगा।"

तब से वह विचार करने लगा कि उस चोर के जीवन से कैसे मुक्त हो। उनका सुनहरा शरीर मुरझा-सा गया। तब उन्हें उनकी पूर्वजन्म की माँ ने प्रत्यक्ष होकर कहा-"घबराओ मत बेटा, यदि तुम इस जीवन से बचना चाहते हो तो ऐसा दिखाओ कि तुम गूँगे हो, बहरे हो। बावले हो। बेअक्ल हो।"

तेमिय ने उसकी सलाह मानने का निश्चय किया।

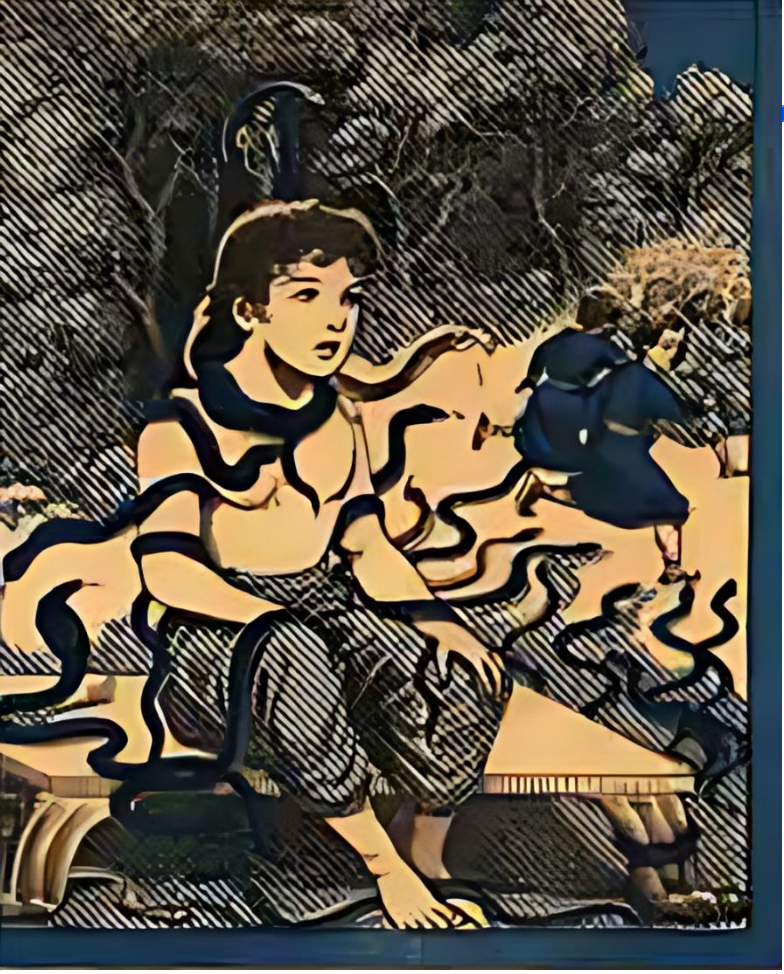
राजा की आज्ञा के अनुसार शेष पाँच सौ लड़कों के रहने का प्रबन्ध भी वहीं किया गया, जहाँ बोधिसत्व रहा करते थे। वे भूख लगते ही दूध के लिये रोते। केवल बोधिसत्व न रोते। उन्होंने सोचा-"नरक जाने से तो



अच्छा यह है कि आदमी भूखा मर जाये।"

दासियों ने जाकर रानी से शिकायत की कि राजकुमार दूध के लिये न रोता था। रानी ने यह बात राजा से कही। राजा ने ब्राह्मणों को बुलवाकर उनकी सलाह ली।

"बच्चे का दूध के लिए रोना आवश्यक नहीं है। ठीक समय पर अगर उसे दूध दिया गया तो वह गटागट पी जायेगा।" ब्राह्मणों ने कहा। दासियों वैसा ही करती रहीं। और यदि जान बूझ कर कभी कभी दूध देना छोड़ देतीं, तो भी बच्चा न



रोता। यह देख उन्हें आश्चर्य होता। यही नहीं, वह और बच्चों की तरह हाथ पैर हिला कर न खेलता, न किलकारियाँ भरता। उसके मुख से कोई भी आवाज न आती। अगर कोई चुटकी बजाता तो उसे भी वह न सुनता। इसका कारण क्या था, किसी को भी न मालूम था।

इस तरह एक साल बीत गया। एक बार दासियों ने मिठाइयाँ लाकर बच्चों के सामने रखी, और यह देखने के लिए कि क्या होता है, वे आड़ में छुप गई। बच्चों ने खूब मिठाई खाई। एक दूसरे की छीनकर खाई। पर तेमिय ने कुछ न खाया, उसने खाने की चाह भी नहीं प्रकट की। यह देख रानी बड़ी दुःखी हुई। उसने अपने हाथ से उसके मुख में मिठाई रखकर कहा-"बेटा, खाओ।"

पाँच वर्ष बीत गये। पाँच वर्ष के बच्चों को अग्नि का भय मालूम होने लगता है। यह जानने के लिए कि तेमिय अग्नि देखकर डरता है कि नहीं, राजा ने एक बड़ा झोपड़ा बनवाया। उस पर ताड़ के पत्ते डलवाये। उसमें सब बच्चों को रखा। फिर उस झोपड़े में आग लगवा दी गई। आग देखते ही बाकी सब पाँच सौ बच्चे भाग गये। परन्तु तेमिय यह सोचकर खड़ा रहा-"नरक भुगतने से तो यही अच्छा है। इस अग्नि में मरना ही अच्छा है।" जब आग उसके पास आने लगी, तो उसे कोई उठाकर बाहर ले गया।

तेमिय सात वर्ष का हुआ। कुछ साँपों के दान्त निकालकर, उनके मुँह बन्द करके, उनको लड़कों के रहने की जगह छोड़ दिया गया। बाकी सब तो डर गये, पर तेमिय जहाँ बैठा था, वहीं बैठा रहा। साँप उसके शरीर पर चढ़ गये। उनके सिर

पर चढ़कर, फण फैलाकर नाचने लगे। तब भी वह न हिला। इस तरह कई तरह से उसकी परीक्षा की गई।

उसके पैरों में कोई कमी न थी। कान, मुख आदि भी जैसे होने चाहिये थे, वैसे थे। कोई भी यह न जान सका कि वह क्यों नहीं हिलता था। क्यों नहीं बोलता था। बच्चों के मनोरञ्जन के लिए नाटक खेला गया। नाटक देखकर और बचे तो हँसे, पर तेमिय न हँसा। एक अभिनेता तलवार लेकर, नाचता नाचता-"कहाँ है वह राजकुमार! उसका शिरच्छेद करना है!" भयङ्कर आबाज में चिल्लाता चिल्लाता, तेमिय पर कूदा। और बच्चे भय से भाग गये। पर तेमिय बिल्कुल न हिला डुला। नाचने बाला, अपना नृत्य समाप्त करके चला गया। कई तरह से, उन्होंने उसमें चेतना पैदा करने की कोशिश की। उसके चारों और यकायक शंख बजाये गये, ढोल बजाये गये। उसके शरीर पर गुड का पानी डालकर मक्खियों से सताया गया। कई दिन उसे बिना नहलाये धुलाये रखा। उसके शरीर से बू निकलने लगी। सब उसको



चिढ़ाने लगे-"यह क्या! उठकर क्यों नहीं नहाते धोते? साफ़ रहना चाहिये, क्या तुम इतना भी नहीं जानते? आखिर उसके पलङ्ग के नीचे आग रखी गई। उसके शरीर पर छाले पड़ गये। "उस अग्नि से तो यही अग्नि अच्छी है।" उसने सोचा।

भले ही उसमें कोई परिवर्तन न हुआ हो, पर अपने इकलौते लड़के को देखकर, माता-पिता शोकातुर हो गये। उन्होने सब परीक्षायें बन्द कर दी। उन्होने अपने लड़के से कहा-"बेटा! तुम में कोई भी कमी नहीं है। हम यह जानते हैं।

कितने ही व्रत करके तुझे पाया है। तेरा इस तरह दु:मुही साँप की तरह पड़ा रहना, हमारे लिए बहुत अपमानजनक है। उठो और औरों की तरह घूमो फिरो, बेटा।" उन्होंने कई बार यह कहा। पर कोई फायदा नहीं हुआ।

तेमिय के सोलह वर्ष पूरे हो गये। "भले ही कोई लँगड़ा हो, लूला हो, गूँगा हो, बहरा हो, पर सयाना हो जाने पर उसमें काम-वासना पैदा होती है। इसलिए लड़के को आकर्षित करने के लिए नर्तकियों को नियुक्त करता हूँ। जब वे उसके चारों ओर नाचेंगे तो सम्भव है कि कोई न कोई उसे आकर्षित करे। जो इस तरह आकर्षित कर सकेगी उसको उसकी रानी बना दूँगा।" राजा ने कहा।

तेमिय को गुलाब जल से नहलाया गया। अच्छे कपड़े पहनाये गये। सुन्दर महल में मोटे गद्दों पर उसे लिटाया गया। उस महल में सब जगह इत्र रखे गये। अगरबत्तिया जलाई गई। मद्य आदि, पेय रखे गये। वहाँ कई नाचनेवाली युवतियाँ गई। उन्होंने अपने नृत्य व सङ्गीत से राजकुमार का मन आकर्षित करने के लिए जीतोड़ प्रयत्न किया। परन्तु वह यह सोचकर न जाने उनके सामने साँस भी लें तो क्या होगा साँस रोक कर बैठा रहा, मानों कोई लकड़ी हो। आखिर, युवतियाँ ऊब उठीं। उन्होंने राजा के पास जाकर कहा-"आपका लड़का मनुष्य नहीं, राक्षस मालुम होता है। हम पास गये कि वह पथरा सा गया।"

इस तरह सोलह वर्ष तक किये गये प्रयत्न निष्फल निकले। तेमिय क्यों ऐसा था, कोई न जानता था।

[अभी और है।]





[१२]

[भाइयों के कहने पर पिङ्गल ने जहाज के कप्तान का अपने घर में आतिथ्य करना स्वीकार कर लिया। अपनी चाल के अनुसार पिङ्गल को बाँधकर कप्तान अपने जहाज पर ले गया। दोनों भाई घर वापस गए। माँ को खूब मारा पीटा। पिङ्गल के लाये हुये धन को तो किया ही, उसके थैले को भी हथिया लिया।]

जीवदत्त और लक्षदत्त ने जब पिङ्गल की लाई हुई थैली खोली तो उसमें कितना ही सोना था, कितने ही कीमती कीमती मोती हीरे थे, वे उनको देख कर बेहोश होते होते बचे। उनका ख्याल था कि पिङ्गल थोड़ा बहुत ही कमा कर लाया था। पर वे यह कल्पना भी न कर पाये थे कि वह कमाई इतनी थी और इस तरह की थी। वे अचरज में थे।

"इस धन से हमारी गरीबी तो गायब होगी ही, सात पीढ़ियों तक गरीबी का नामो निशान भी देखने को न मिलेगा।" जीवदत्त कहता कहता हँसा।

"हाँ! भैया, अगर अवन्तीपुर के राजा को मालूम हो गया कि हमारे पास इतना धन है तो वह अपने मन्त्री को लेकर अपनी लड़की की शादी की बातचीत हमसे करने हमारे घर आयेगा।" लक्षदत्त ने कहा।



दोनों लड़कों को इसतरह आपस में बातें करता देख, माँ में अत्यन्त प्रेम उमड़ आया। वह यह भूल गई कि तब तक वे दोनों उसको बुरा भला कह रहे थे। उसने उनसे कहा- "अच्छा, बेटो, अब तुम एक काम करो। पहले की तरह अब सारा धन बरबाद न कर देना। शादी करके अपना घरवार बसाओ। मैं भी तुम्हारे साथ रहती अपना समय बिता दूँगी।"

माँ के यह कहते ही दोनों लड़के, नागों की तरह फुँफकारते हुए उठे। "हम चाहेंगे तो शादी करेंगे, नहीं तो बैरागी बने बने फिरेंगे। तुझे क्या? हम जानते हैं कि तुझे हम पर बिल्कुल प्रेम नहीं है। तेरा सब कुछ, लाड़ला पिङ्गल ही तो है। झूठी मूठी बातें बनाकर अब तुम हमारे पिता की दौलत में हिस्सा बँटाने की सोच रही हो। क्यों?"

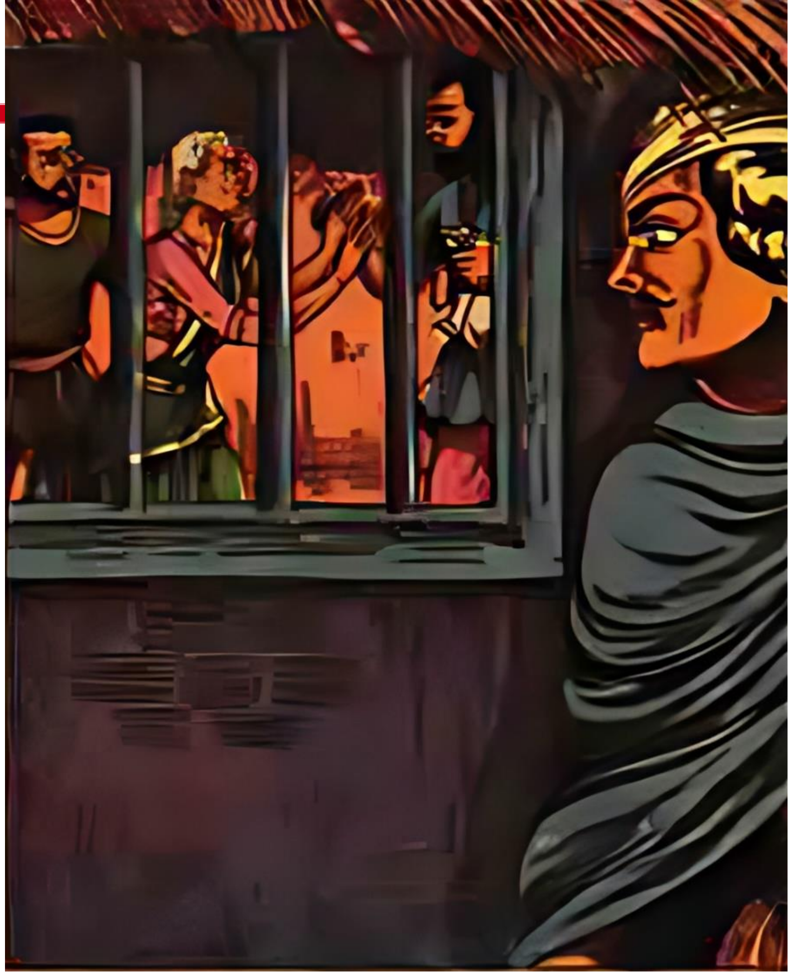
"वह तुम्हारे पिता की कमाई हुई दौलत नहीं है। वह पिङ्गल की अपनी, निज की कमाई है। तुम उसे उठाकर ले ही जा रहे हो। इसलिये मैं कुछ नहीं कह सकती। मैं तो सिर्फ यही चाहती हूँ कि वह जादूवाली थैली मुझे देते जाओ। यदि वह मेरे पास रही तो जब कभी जो कुछ खाने को चाहूँगी, वह ले लिया करूँगी। मुझे कौर कौर के लिए घर घर भीख माँगने की जरूरत न होगी।" माँ ने अपने दोनों लड़कों से कहा।

"तू मेरी माँ ही नहीं है। उस हालत में अगर तू भीख भी माँगे तो मुझे क्या?" जीवदत्त ने तङ्ग आकर कहा।

"हाँ! भाई, यह हमारी माँ कैसे होगी, जब पिता की कमायी हुई दौलत अपने छोटे लड़के के लिए छुपाये रखी हुयी है!" लक्षदत्त ने कहा।

माँ ने सोचा कि उनसे बातचीत करने का कोई फायदा न था। वह एक कोने में जाकर बैठ गई। जीवदत्त और लक्षदत्त ने पिङ्गल के लाये हुये धन को आपस में दो हिस्सों में बाँट लिया। फिर जादूवाली थैली के बारे में हपड़-झपड शुरू हुई। दोनों भाई उस थैले को लेना चाहते थे। बात इतनी बढ़ी कि दोनों एक दूसरे की जान के पीछे पड़ गए। माँ ने उन दोनों के पास जाकर कहा-"बेटो! तुम आपस में लगड़ झगड़ कर एक दूसरे का नुकसान न करो। भले ही तुम मुझे सताओ। पर यह मैं कैसे भूल सकती हूँ कि तुम मेरे लड़के हो! वह थैला मेरे पास रख दो। तब ऐसी कोई बात न रह जायेगी, जिस पर तुम झगड़ सको।"

"थैले में मैं अपना हिस्सा लेकर रहूँगा।" कहता कहता जीवदत्त रसोई से चाकू लेने गया। पर माँ ने उसे रोक कर कहा-"बेटा! जीवदत्त! वह न करो। एक बार तुमने उसके टुकड़े किये कि नहीं कि उसका जादू चला जायेगा। उसका किसी न



किसी को उपयोग करना होगा। टुकड़े करने से कोई फायदा नहीं।"

"यह बात है तो यह थैला मुझे ही चाहिये।" लक्षदत्त ने कहा।

"जा जा, मैं घर में सबसे बड़ा हूँ, बड़ा लड़का हूँ। इस तरह की चीजें शास्त्रों और पुराणों में भी लिखा है बड़े लड़के को ही मिलनी चाहिये।" जीवदत्त ने कहा।

इस तरह दोनों भाइयों का लड़ना झगड़ना अवन्तीपुर के एक सरदार ने, जो शहर में गश्त लगा रहा था, सुना। यह धन और थैले के बारे में सब कुछ



जान गया। वह सवेरे सवेरे राजा के महल में गया। उसने राजा को सारा हाल बता दिया।

अवन्ती नगर का राजा तो यूँ ही बड़ा कञ्जूस था और उसे जब यह मालूम हुआ तो उसे बड़ा लालच हुआ। उसने अपने कोतवाल को बुलाकर हुक्म दिया कि उन भाइयों को और उनके घर की सभी चीजों को, मय झाड़ू, बुहारी के पकड़ लिया जाय, और जब्त कर लिया जाय।

कोतवाल सिपाहियों को साथ लेकर गया। उसने जीवदत्त और लक्षदत्त को पकड़ लिया। फिर उन्होंने सारे घर की तलाशी ली। उन्हें थैली तो मिली ही। बाकी सब चीजों को उठवाकर वे राजमहल ले गये।

जीवदत्त और लक्षदत्त ने राजा को बताने से इनकार कर दिया कि असल में क्या बात थी। परन्तु जब सिपाहियों ने उनको पाँच सात कोड़े मारे तो उन्होंने शुरू से अन्त तक सारी कहानी रोते धोते सुना दी।

"यानि यह तुम्हारी दौलत नहीं।" राजा ने, खुशी खुशी हँसते हुये पूछा। "अगर किसी चीज़ का कोई हकदार न हो तो कानून के मुताबिक वह चीज़ मेरी हो जाती है। तुमने अपने भाई पिङ्गल को गुलाम के रूप में बेच दिया है। इसलिये उसको किसी प्रकार के कोई अधिकार नहीं हैं। और अब तुम्हारी बात? क्यों कि तुमने उसकी धन दौलत को चोरी चोरी आपस में बाँटने की कोशिश की है, इसलिये मैं तुम्हें २० साल की कैद की सजा देता हूँ।"

".. महाराज! हमें कृपाकर के रिहा कीजिये। न हम यह धन चाहते हैं, न

वह थैला ही। हमें जहाँ मर्जी वहाँ घूमने की छूट दीजिये। हमारे लिये यही काफी है।" जीवदत्त और लक्षदत्त ने कहा। पर राजा उन्हें छोड़ना न चाहता था। ऐसा वह करता तो लोगों में जाकर वे उसकी बदनामी करते, कहते कि उसने अन्याय किया है। जनता में उसके प्रति थोड़ा बहुत असन्तोष फैलता।

"तुम अपने अपराध को स्वीकार कर ही रहे हो और यह भी मान रहे हो कि तुमने अपनी माँ को सताया है। इसलिये तुम्हें जेल भुगतनी ही पड़ेगी। मगर मैं तुम्हारी माँ के जीवन निर्वाह के लिए महाबार दस मुहरों का प्रबन्ध कर रहा हूँ।" राजा, यह फैसला देकर अपने बगीचे में चला गया। सैनिकों ने लक्षदत्त और जीवदत्त के पैरों में बेड़ियाँ डाल दीं। बेड़ियों को मोटे मोटे लोहे के गोलों से बाँध दिया।

उनको ले जाकर जेल की एक काल कोठरी में डाल दिया और बाहर से दरवाजे पर मोटा ताला लगा दिया।

दोनों भाई अपनी हालत पर रोने लगे। तब उन्हें पश्चात्ताप हुआ कि



उन्होंने भाई और माँ को धोखा दिया था। पर वे अब करते भी तो क्या करते! काले, बदबूवाले, सड़े, सीलन वाले फर्श पर पड़े पड़े, उस नरक में, रोते रोते आखिर वे सो गये।

*   *   *

भाइयों के धोखे से पिङ्गल को जहाज के सरदार का गुलाम बनना पड़ा था न? उस कप्तान ने पिङ्गल को उस जगह जञ्जीरों से बाँध दिया, जहाँ बैठकर गुलाम चप्पू चलाया करते थे। उसके साथ और भी गुलाम थे। सवेरे सवेरे जहाज ने लङ्गर उठाया। कप्तान

की आज्ञा होते ही गुलाम जहाज को समुद्र में ले गये।

वह कप्तान ऊपर से तो सज्जन मालूम होता था; पर था वह बदनाम समुद्री डाकू। बहाना यह था कि वह माल एक बन्दरगाह से दूसरे बन्दरगाह तक ले जाता था। वह बन्दरगाह पर देखता कि किस जहाज पर क्या चीज लादी जा रही थी। फिर उस जहाज को समुद्र में जाते हुये रोकता और उसे लूटता। जिन जहाजों को लूटता, उनको डुबाकर समुद्र के हवाले कर देता। अगर उस जहाज में कोई जिन्दा बचता, तो उसे डर था, कि वे असलियत उजागर कर देते।

गुलामों के साथ चप्पू चलाते चलाते पिङ्गल ने भल्लूककेतु के बताये हुये मन्त्र को बहुत याद करने की कोशिश की। बहुत माथा पच्ची की; पर वह मन्त्र याद न आया। कैसे धोखा देकर उसके भाइयों ने किस तरह उसको कप्तान को बेच दिया था- -जब वह यह सोचता तो खौल उठता। पिङ्गल जान गया कि क्योंकि वह उन्हें रोकने के लिए अपने घर नहीं था इसलिये वे अवश्य माँ को बूरी तरह सता रहे होंगे।



इस गुलामी से कैसे निकला जाय? पिङ्गल रात दिन यह सोचता रहता। एक दिन अचानक, समुद्र में एक बड़ा तूफ़ान चलने लगा – ऊँची ऊँची लहरों पर तूफ़ान में जहाज इस तरह थपेड़े खा रहा था जैसे किसी भँवर में कोई सूखा पत्ता फँस गया हो। कप्तान खतरा ताड़ गया। वह अपने नौकरों चाकरों, गुलामों को हुक्म देता जहाज पर इधर उधर चहल कदमी करने लगा। उसी समय कुछ दूरी पर एक जहाज समुद्र की ऊँची लहरों पर बुरी तरह डावाँडोल हो रहा था।

कप्तान ने दुरबीन से उस जहाज की ओर देखा। वह बहुत बड़ा जहाज था। ऐसा जहाज, जो एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप जाता था। बड़े व्यापारियों के समुदाय का था वह जहाज। कप्तान जानता था कि उसमें बहुत-सा कीमती माल भरा हुआ होगा।

समुद्र में दो जहाज खतरे में फँसे हुये थे। नाविक, जहाजों को बचाने के लिए यथाशक्ति प्रयत्न कर रहे थे। कप्तान ने सोचा कि ऐसी हालत में उसने अगर जहाज को घेर लिया और उस पर छापा



मारा तो वह बहुत-सा माल लूट सकेगा। कप्तान के मन में यह लालच पैदा हुआ। उसके नौकर-चाकर इस तरह की खतरनाक परिस्थितियों के आदि थे। और जो उस जहाज में आदमी थे, वे समुद्र में जहाज चलाना तो जानते होंगे; पर उन्हें समुद्र में युद्ध करने की आदत न होगी। यह उनका अनुमान था।

कप्तान ने यह सोचकर, अपने अनुचरों का आज्ञा दी। उस चिंघाड़ते तुफान में भी वे तलवार, भाले लेकर उस व्यापारी जहाज पर हमला करने के लिए तैयार हो गये।

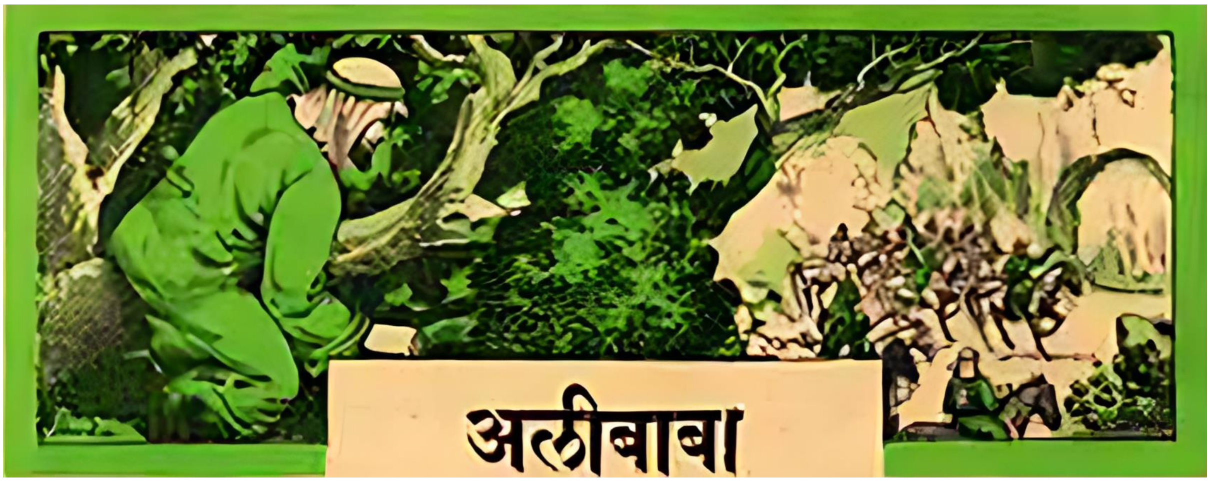
पिङ्गल भी और गुलामों के साथ यथाशक्ति चप्पू चला रहा था। धीमे धीमे, जहाज, उस व्यापारी जहाज के पास जाने लगा। कप्तान, अपने निकट अनुचरों के साथ मस्तूल का सहारा लिये खड़ा था और दुर्बीन से व्यापारी जहाज की ओर देख रहा था। परन्तु वह यकायक भय के कारण चीख उठा।

"सब धनुष बाण छोड़ दो। जहाज को पीछे ले जाओ। वह व्यापारी जहाज नहीं है। वे जलती मशालों को बाणों पर बाँधकर हमारे जहाज पर छोड़ने जा रहे हैं।"

कप्तान अभी कह रहा था कि उस जहाज से जलती मशालों वाले बाण, पिङ्गल वाले जहाज में गिरने लगे। उनमें से कई मस्तूल के पास खड़े कप्तान के सैनिकों पर गिरे। उनके कपड़े जलने लगे। जहाज में हाहाकार मचने लगा। कप्तान पागल की तरह चिल्लाने लगा- "गुलामों को छोड़ दो। अब समय आ गया है जब कि उन्हें चप्पू छोड़कर तलवार पकड़कर, जहाज की रक्षा करनी होगी।" वह चिल्लाता जाता था।

(अभी और है)





अलीबाबा

ईरान के एक नगर में दो भाई रहा करते थे। एक का नाम था कासिम और दूसरे का अलीबाबा। उनका पिता, दोनों को थोड़ी बहुत जमीन-जायदाद देकर गुजर गया था। कासिम ने धनी घराने में शादी की। व्यापार आदि, करके वह शीघ्र धनी हो गया। अलीबाबा की शादी गरीब घर में हुयी। वह लकड़ी बेचकर, जिन्दगी बसर करता। वह रोज़ जङ्गल जाता, लकड़ियाँ काटता और अपने तीनों गधों पर उन्हें लादकर शहर ले जाता और वहाँ बेचता।

एक दिन जब अलीबाबा जङ्गल में लकड़ियाँ काट रहा था तो उसे दूरी पर धूल उड़ती दिखाई दी। वह धूल पास आती जाती थी। उसने गौर से देखा तो पता लगा कि कुछ आदमी घोड़ों पर सवार हो कर आ रहे थे। उसने अनुमान किया कि वे चोर हो सकते थे। वे चाहे कुछ भी हो, वह अपनी रक्षा के लिए, ऊँचे टीले के सबसे ऊँचे पेड़ पर चढ़ गया। अपने को पत्तों से ढक लिया। वह किसी को न दिखाई देता था; पर वह सब कुछ नीचे बिल्कुल साफ़ साफ़ देख सकता था।

जल्दी घुड़सवार आकर उसी टीले के पास उतरे। उन सबने अपने घोड़े बाँध दिये और उनके मुखों पर दानों के थैले लटका दिये। जीन पर से भारी थैले उठाकर हाथ में ले लिये। अलीबाबा को लगा, हो न हो, उन थैलों में चान्दी सोने जैसी भारी चीजें थीं। उन चालीस आदमियों में एक सरदार था। उसने झाड़ियों में से, टीले के पास जाकर कहा-"तिल,



दरवाजा खोल।" उसके कहते ही पत्थर में एक दरवाजा-सा खुला और चोरों के अन्दर चले जाने के बाद सरदार भी अन्दर गया। फिर पत्थर पहले की तरह अपनी जगह आ गया।

अलीबाबा को बहुत डर लगा। वह पेड़ पर से न उतरा। कुछ देर बाद, पत्थर का दरवाजा फिर खुला। चोरों का सरदार बाहर आया औरों के बाहर आने के बाद "दरवाजा बन्द हो तिल" उसने कहा। दरवाजा तुरत बन्द हो गया। सबने अपने अपने घोड़े खोले। वे उन पर चढ़ गये। सरदार पहले चला। उसके पीछे और।

यह सब अलीबाबा पेड़ पर से देख रहा था। चोरों के आखों से ओझल होने के बहुत देर बाद वह पेड़ पर से उतरा। उसने जानना चाहा कि अगर उसने भी वही शब्द कहे, जो चोरों के सरदार ने कहे थे, दरवाजा खुलता है कि नहीं? वह भी झाड़ियों में से होता हुआ पत्थर के दरवाजे के पास जाकर खड़ा हो गया। उसने कहा- "दरवाजा खोल, तिल" दरवाजा फौरन खुल गया।

अलीबाबा का ख्याल था कि अन्दर अन्धेरा होगा। परन्तु वहाँ उसे एक बड़ा कमरा दिखाई दिया, जो चमक-सा रहा था। ऊपर से कमरे में प्रकाश आ रहा था। कमरे में तरह तरह की चीजें थीं। रेशमी थान, ज़रीदार कपड़े, जेवर जवाहरात, सोने चान्दी के कलश और जाने क्या क्या चीजें रखी हुई थीं। यह सब देख, अलीबाबा ने सोचा कि न मालूम कितने वर्षों से चोर वहाँ रह रहे थे। वह हिम्मत करके अन्दर गया। और उसने उतना सोना इकट्ठा कर लिया जितना कि उसके गधे ढो सकते

थे। उसने उन्हें गधों पर लादा और उन पर लकड़ियाँ डाल दीं ताकि वह दिखाई न दे। बाहर आकर उसने कहा-"दरवाजा बन्द हो, तिल।" तुरन्त दरवाजा बन्द हो गया।

अलीबाबा अपने गधों को सीधे घर के पिछवाड़े में ले गया। घर के सब दरवाजे बन्द कर दिये। लकड़ियाँ हटाकर, वह सोने के थैले घर में ले गया। उसने उन्हें अपनी पत्नी के सामने रखा। उतना सोना देख उसकी पत्नी की आँखें चौंधिया गई। उसने उसे सारा किस्सा सुनाया और कहा कि वह किसी को भी, उसके बारे में कभी कुछ न बताये।

उसकी पत्नी की खुशी का ठिकाना न था। उसने कहा कि वह उनको गिनेगी।

"अरे उन्हें गिनने के लिए तुम्हारी जिन्दगी काफी नहीं है। हमारे पास समय नहीं है। इन्हें हिफाजत से फौरन कहीं रख दो।"

"हाँ! तू ठीक कह रहा है। पर मोटे तौर पर पता तो लगे कि सोना कितना है। वजन देखा जाये। तेरे



गढ़ा खोदते खोदते मैं माप ले आऊँगी।" वह अपने जेठ के घर गई और जेठानी से पूछा-"क्या अपना माप दे सकोगी। अभी लाकर दे दूँगी।"

कासिम की पत्नी माप देने के लिए मान गई। पर उसने यह जानने के लिए कि देवर के घर कौन-सा धान तोला जा रहा था, माप के तले में गोंद लगाकर उसे दे दी। अलीबाबा की पत्नी अपने घर गई। उसने पति के लाये हुए सोने को मापा तोला। फिर उसने पति के पास जाकर पूछा-"क्या गढ़ा खोद दिया है?"

अलीबाबा ने गढ़ा खोदना खतम किया। पति-पत्नी ने मिलकर उस सोने को गढ़े में डाला। अलीबाबा की पत्नी ने जाकर वह माप जेठानी को वापिस कर दिया। उसने नहीं देखा कि उसके तले में एक मुहर चिपकी रह गई थी।

"काम खतम होते ही, तेरा माप तुझे दे दिया है।" यह उससे कहकर अपने घर चली गई।

कासिम की पत्नी ने जब माप के अन्दर देखा तो उसे सोने की मुहर दिखाई दी। वह चकित रह गई।

"यह क्या? क्या अलीबाबा इतना धनी हो गया है कि सोने को माप में तोल रहा है! इतना धन इसके पास यकायक कैसे आ गया?" उसने सोचा। वह ईर्ष्या से जल रही थी।

यह सब जब हो रहा था कासिम घर में न था। वह दुकान पर था। उसके आते ही उसकी पत्नी ने कहा-"तुम सोच रहे हो कि तुम बहुत धनी हो। तुम्हारा भाई तुम से हजार गुना अधिक धनी है। यह जान लो। उसके पास इतनी सोने के मुहरें हैं कि वह गिनता



नहीं है, मापता है। तुमने अपने को समझ क्या रखा है?"

"तुम क्या कह रही हो? मुझे समझ मैं नहीं आ रहा है।" कासिम ने कहा। तब उसकी पत्नी ने सारी बात बताई। माप के तले में लगी सोने की मुहर भी दिखाई। वह बहुत प्राचीन मुहर थी। किस राजा के समय की थी, यह कासिम न जान सका। पर जब से पैसेवाली विधवा से शादी की थी वह तब से अपने भाई को पराया समझने लगा था। इतने दिनों बाद अलीबाबा धन कमा पाया था। उसका खुश होना अलग, वह ईर्ष्या से जलने लगा। उस दिन रात भर उसे नींद न आई। अगले दिन उसने अलीबाबा के घर जाकर उससे कहा-"अलीबाबा, तेरा रवैय्या मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। एक तरफ यह दिखाते हो कि तुम गरीब हो, और दूसरी तरफ छुपे छुपे सोना तोलते हो। कल जब तेरी पत्नी ने हमारा माप वापस दिया तो उसके तले में यह मुहर थी।"

यह सुनते ही अलीबाबा हैरान रह गया। वह जिस बात को किसी से न कहना चाहता था, पत्नी की गलती के





कारण उसके भाई और भाभी को मालूम हो गई थी। परन्तु अलीबाबा ने न आश्चर्य दिखाया, न भय ही। उसने जो कुछ गुजरा था वह सब सुनाया। "अगर तुमने यह बात किसी से न कही, तो तुम्हें भी मैं सोने का एक हिस्सा दूँगा।" उसने भाई से कहा।

"हिस्सा तुम क्यों न दोगे? पर मैं वह नहीं पूछ रहा हूँ। मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह गुफा कहाँ है। और वहाँ तक जाने का रास्ता क्या है? जब जरूरत होगी मैं भी वहाँ से सोना ले आऊँगा।"

अलीबाबा भी क्या करता? जो कुछ भाई ने पूछा था वह सब उसने बता दिया– आखिर यह बताये बगैर भी न रह सका कि दरवाजा क्या कहने से खुलता था।

कासिम, अगले दिन सवेरे अन्धेरे में ही दस बड़े बड़े खच्चरों को लेकर, अलीबाबा के बताये हुये रास्ते पर जङ्गल में निकल पड़ा। अलीबाबा के चढ़े हुये पेड़, झाड़ियाँ, टीला पहचानता हुआ, वह पत्थर के दरवाजे के पास पहुँचा। "दरवाजा खोल, तिल" उसके यह कहते ही दरवाजा खुला। कासिम के अन्दर जाते ही दरवाजा फिर बन्द हो गया।

अन्दर रखी धनराशि को देखकर कासिम चकरा गया। अलीबाबा की बातों से वह अनुमान न कर पाया था कि वहाँ इतना धन था। उसका मन धन पर ही लगा हुआ था। वह जो जो थैले ले जाना चाहता था, दरवाजे के पास ले आया। परन्तु धन एकत्रित करने में वह इतना तन्मय हो गया कि दरवाज़ा खोलने का मन्त्र भूल गया। "दरवाजा खोलो, तिल" के बदले, वह न जाने क्या क्या कहता

रहा। कभी, सौंफ कहता, कमी जीरा। दरवाजा न खुला। कासिम घबरा गया। वह झुञ्झलाकर वहीं रह गया।



कासिम ने सपने में भी ख़याल न किया था कि मामला इतना उलझ जायेगा। वह जान गया कि वह खतरे में फँस गया था। वह जमा किये हुए थैलों को पैर से इधर-उधर फेंकने लगा। उसे तब उस कमरे की धनराशि किञ्चित मात्र भी आकर्षक न लगी।

ठीक दुपहरी में चोर वहाँ आये। जब वे दूरी पर ही थे कि उनको टीले के पास कासिम के खच्चर दिखाई दिये। उन पर उन्होंने कुछ लदा भी देखा। वे घबरा गये। उन्होंने अपने घोड़ों को और तेजी से दौड़ाया। वे जल्दी टीले पर पहुँच गये। उन्होंने खच्चरों को जङ्गल में भगा दिया। तलवारें निकालकर, मन्त्र पढ़कर, दरवाज़ा खोलकर, वे अन्दर गये।

इतने में, घोड़ों की आहट सुनकर कासिम जान गया कि चोर वापिस आ गये थे। दरवाजा खुलते ही उसने बाहर भागने की कोशिश की। भागते भागते उसने सरदार को एक धक्के में नीचे गिरा दिया। परन्तु और चोरों ने उसे घेर लिया और उसे मार दिया।

फिर उन्होंने अपनी गुफा गौर से देखी। कासिम ने जो थैले दरवाज़े के पास रखे थे उनको ले जाकर उनकी जगह पर रख दिया। अलीबाबा द्वारा ले जाये गये सोने के बारे में भी वे जान गये।

कासिम कैसे अन्दर आया था, दरवाजा खोलने का मन्त्र दूसरे कैसे जान गये थे? वे अनुमान न कर सके, अगर कोई इस मन्त्र को जानता हो उसको डराने के लिये, चोरों ने कासिम के शरीर के चार टुकड़े

कर दिये। गुफा के दरवाजे के दोनों तरफ, उन्होने दो दो टुकड़े लगा दिये। फिर दरवाजा बन्द करके, घोड़ों पर सवार हो, इधर उधर डाका डालने निकल गये। रात हो गई। कासिम घर वापिस न आया। उसको न आता देख उसकी पत्नी घबराई। अलीबाबा के घर जाकर उसने अलीबाबा से कहा-"तुम्हारे भाई जङ्गल क्यों गये हैं, तुम जानते ही हो। अन्धेरा हो गया है।

वे अभी तक वापिस नहीं आये हैं। जाने किस आफत में वे फँस गये हो। मुझे डर लग रहा है।"

"भाभी, सिर्फ इतनी सी बात पर तुम्हारे घबराने की कोई जरूरत नहीं है। शहर में शोर शरावे के खतम होने से पहले ही वह आ जायेगा।" अलीबाबा ने कहा।

कासिम का काम क्योंकि भेद भरा था, इसलिए कासिम की पत्नी को अलीबाबा की बातें ठीक ही लगी। वह घर गई और आधी रात तक वह पति की इन्तज़ार करती रही। परन्तु उसके बाद उसके सन्देह दुगुने तिगुने हो गये। वह रो भी नहीं सकती थी। इसलिए पति के लिए



घुट घुट कर रोने लगी। देवर की बातों में दखल देने के कारण वह अपने को कोसने लगी। वह रात भर रोती रही। जब वह सवेरे अलीबाबा के घर गई तो उसकी आँखें सूजी हुई थीं। उसको देखते ही अलीवावा जान गया कि वह उसके पर क्यों आई थी।

उसके पूछने से पहले ही अलीबाबा अपने तीनों गधों को लेकर जङ्गल चला गया। जाते समय उसने भाभी से दादस बाँधकर रहने को कहा। रास्ते में न उसे उसका भाई दिखाई दिया, न उसके खच्चर ही। और तो और, उसको टीले के पास खून के दाग दिखाई दिये। अलीबाबा का माथा ठनका। जब मन्त्र पढ़कर, वह गुफा के अन्दर गया और अपने भाई के शव के टुकड़े दरवाजे पर टंगे पाये। वह काठ-का-सा हो गया।

यद्यपि उसके भाई ने उसके प्रति बड़े माई का कर्तव्य नहीं निभाया था, तो भी उसने उसके प्रति अपना कर्तव्य निभाने का निश्चय किया। उसने अपने नाई को एक गधे पर लादकर उसे लकड़ियों से ढ़का। फिर उसने कई सोने की थैलियाँ





लेकर गधों पर लादी। उन्हें भी लकड़ियों से ढक दिया। दरवाजा भी पहले की तरह बन्द कर दिया।

अन्धेरा होने से पहिले वह जङ्गल से न आया। वहीं थोड़ी देर ठहर गया। अन्धेरा होते ही वह शहर में घुसा। जिन दो गधों पर वह सोना लाया था उन्हें अपने घर के पिछवाड़े में रोक दिया। पत्नी से कहा कि वह उनका भार उतार दे। तीसरे गधे को लेकर वह अपने भाई के घर गया। उसने घर का दरवाजा खटखटाया।

मोगियाना नाम की गुलाम लड़की ने दरवाजा खोला। वह कासिम के घर में काम करनेवाली नौकरानी थी। बड़ी अक्लमन्द और समझदार थी। वह बड़ी से बड़ी उलझनों में अक्ल से काम लेती। उसने मोगियाना से कहा-"यह बड़े रहस्य की बात है। इस गधे पर तेरे मालिक का शव है। हमें, लोगों को यह विश्वास दिलाना है कि वे बीमार थे और बीमारी के कारण मर गये हैं। फिर उनकी अन्त्येष्टि क्रिया करनी है। यह सब कैसे करोगी? इसकी जिम्मेवारी तुम्हारी ही है। जा। अपनी मालकिन से यह सब कह!" उसने भाई का शव उसके घर में रख दिया। मोगियाना को फिर बताया कि क्या क्या उसे करना होगा। वह अपना गधा लेकर अपने घर चला गया।

अगले दिन सवेरे मोगियाना एक औषधी की दुकान में गई। "मुझे थोड़ी कस्तूरी दीजिये।"

"किसके लिये?" औषधी बेचनेवाले ने पूछा।

"हमारे मालिक कासिम जी की तबीयत ठीक नहीं है। वह न कुछ खा पा रहे हैं, न बोल ही पा रहे हैं।" मोगियाना ने कहा।

शाम को आकर उसने पूछा-"थोड़ा गरल हो तो दीजिये। यह भी असर करेगी कि नहीं, मालूम नहीं।" उसने रोनी-सी शक्ल बनाई हुई थी।

उस दिन अलीबाबा अपनी पत्नी के साथ कासिम के घर दो-तीन बार गया। उनके शक्ल पर भी शोक नज़र आता था। सब को विश्वास हो गया कि कासिम सचमुच बहुत बीमार था। शाम को जब कासिम के घर रोना-धोना शुरू हुआ तो सब जान गये कि कासिम मर गया था। मोगियाना ने सब से कहा कि उसका मालिक मर गया था।

अगले दिन सवेरे मोगियाना मुस्ताफा नाम के बूढ़े मोची की दुकान पर गई। यह जानती थी कि वह अपनी दुकान सवेरे ही खोलता था। उसने बूढ़े मोची के हाथ में एक दीनार रखकर कहा-"बाबा मुस्ताफा, तू अपने सीने के औजार लेकर मेरे साथ आ। पहले ही बता देती हूँ कि जहाँ मैं तुझे ले जा रही हूँ, उसके बारे में, किसी को कुछ न मालूम हो। इसलिए आधे रास्ते में मैं तेरी आँखों पर पट्टी बाँध दूँगी।



बूढ़े को सन्देह हुआ-"ऐसा लगता है तुम मुझसे कोई ऐसा काम करवाने जा रही हो, जो मुझे नहीं करना चाहिये।"

"तेरी कसम, बाबा, ऐसा कोई काम नहीं है। मेरे साथ आ। कुछ फिक्र न करो।" मोगियाना ने कहा।

मुस्ताफा उसके साथ चल पड़ा। आधे रास्ते में, अपने वचन के अनुसार, मोगियाना ने उसके आँखों पर पट्टी बाँध दी। वह उसको अपने मालिक के घर ले गई। उसको शववाले कमरे में ले गई। तब उसकी आँखें खोलीं।

"बाबा, यदि तुमने शव को जल्दी सी दिया तो मैं तुम्हें एक और सोने की दीनार दूँगी।" मोगियाना ने कहा। मुस्ताफा ने जल्दी जल्दी अपना काम कर दिया। दीनार ले ली। आँखें बँधवा कर वह उसके साथ चला। जहाँ पहले उसकी आँखें बन्द की थीं, वहाँ आकर उसने आँखें खोल दी। वह फिर अपने घर चली गई। जाने से पहले उसने देख लिया कि बूढ़ा उसका पीछा नहीं कर रहा था। बड़ी होशियार थी वह नौकरानी।

घर आते ही मोगियाना ने अपने मालिक की लाश को नहलाया। अलीबाबा ने साम्राणी जलाई। उसको वह पोषाक पहनाई, जो विधि के अनुसार पहनानी थी। जल्दी ही मस्जिद से मुल्लाह भी जा गया। अन्त्येष्टि संस्कार करवाने के लिये भी आदमी आ गया। चार आदमी शव को उठाकर कब्रिस्तान ले गये। केवल मोगियाना ही छाती पीटती, रोती रोती शव के साथ गई। कासिम की पत्नी, आस- पड़ोस की स्त्रियों के साथ, रोती घर में ही रही।

इस तरह, कासिम का डाकुओं के हाथ मारा जाना, ढक दिया गया। उसकी मृत्यु का रहस्य जाननेवाले केवल अलीबाबा, मोगियाना और कासिम की पत्नी मात्र थे। अन्त्येष्टि के दो-तीन दिन बाद, बोरिया, बिस्तर लेकर अलीबाबा ने अपने भाई के घर रहने का प्रबन्ध कर लिया। जो सोना-चान्दी वह चोरों की गुफा से लाया था, वह भी रात में लुके छुपे, अलीबाबा नये घर ले गया।

जो दुकान पहले कासिम चलाया करता था अब अलीबाबा का बड़ा लड़का चलाने लगा। (अभी और है।)





* प्राण-रक्षा *

विक्रमार्क अपनी जिद पर रहा। वह फिर वृक्ष के पास गया। शव को उतार कर कन्धे पर डाल कर श्मशान की ओर चल दिया। शव में स्थित बेताल ने कहा-"तू एक अपरिचित के लिये कष्ट झेल रहा है। पर तुम यह नहीं समझ पाते वह कितना खतरनाक है। जो दूर के आदमियों की सहायता करते है, उनकी सहायता भी कैसी आपतिजनक हो जाती है, यह निरूपित करने के लिए एक कहानी सुनाता हूँ।" उसने यो कहानी सुनाई।

किसी दूर देश में समुद्र के किनारे झोंपड़ा डालकर एक बूढ़ा रहा करता था। समुद्र का वह किनारा पथरीला था। समुद्र में जब आर आता तो पत्थरों में काई



अटक जाती। बूढ़ा उसको इकट्ठा कर लेता और गाँव में बेच देता, उससे आजीविका चलाता। गाँव में थोड़ी बहुत खेती होती थी। पथरीली जगह होने के कारण खेती बड़ी मुश्किल से हो पाती थी। इसलिए किसान काई खरीद लेते और उसका खाद के रूप में उपयोग करते। जो पैसा देकर काई नहीं खरीद पाते, वे स्वयं समुद्र के पास जाकर काई जमा करके ले आया करते थे। परन्तु इसी काम को रोजी बना करके, जीनेवाले सिवाय उस बूढ़े के और कोई न था।

बूढ़े को यकायक गठिया हो गया। जो पचास वर्ष काई जमा करते करते जीता आया था उसकी यह हालत हो गई थी कि वह चल भी न पाता था। इसलिए उस काम पर उसकी पोती लग गई। उसका नाम था मल्ली।

मल्ली की उम्र करीब करीब सोलह वर्ष की थी। उसका सारा जीवन समुद्र के किनारे ही गुजरा था। जब दादा काई के लिए जाया करता तो वह भी साथ जाती। दादा काई बेचने जाता तो वह समुद्र के किनारे के पत्थरों के ढेर में अटकी काई खोजती।

इसी खोज के सिलसिले में एक दिन मल्ली को बहुत ही अद्‌भुत जगह दिखाई दी। वह एक ताल सा था। बूढ़े के घर के नीचे, थोड़ी दूर पर, समुद्र के भूमि के अन्दर कुछ दूर आने से वह ताल बना था। उसमें जगह जगह पत्थर थे। समुद्र में जब ज्वार आता तो उनमें से काई डूब डाब जाते। और जब भाटा आता तो समुद्र की काई बहुत सी वहीं रह जाती।

यह ताल बहुत खतरनाक था। परन्तु वहाँ बहुत काई थी। वहाँ जाने के लिए

रास्ता न था। मल्ली ने हाथ से उठाकर, जगह जगह बड़े बड़े पत्थर डाले। और अपने घर से ताल तक एक रास्ता-सा बना लिया। यह भी जान गई कि कौन से पत्थर काई के कारण फिसलते थे और कौन से नहीं। बड़ी मेहनत के बाद, वह बहुत सी काई इकट्ठी करती और रोज गाँव जाकर बेचती।



मल्ली बहुत ही भोली भाली कन्या थी। जितनी दिलचस्पी वह काई इकट्ठी करने में दिखाती उतनी किसी और चीज़ में नहीं दिखाती। ग्राम में उसके मित्र कोई न थे। अपनी उम्र की लड़कियों की तरह न वह अच्छे कपड़े ही पहनना चाहती थी न जेवर जवाहरात ही। काई के बेचने के मामले में भी वह बड़ी सख्त रहती। कोई उसे धोखा देने की कोशिश करता तो वह उसे कुत्ते की तरह काटती।

वह एक दिन ताल में काई इकट्ठा कर रही थी कि एक युवक उस तरफ आया। उस युवक का नाम भरत था। वह गाँव के एक बड़े किसान का लड़का था।

यह जानकर कि वह काई इकट्ठा करने आया है; मल्ली ने उसके पास जाकर गुस्से में पूछा-"तुझे यहाँ क्या काम है?"

"जो काम तुझे है, वह मुझे भी है। में नहीं जानता था कि यहाँ इतनी काई है।" भरत ने कहा।

"वाह, काई जरा छूकर तो देख।" मल्ली ने डराते हुए कहा।

"क्या करोगी? क्या मुझ में तुम्हारे जितना बल नहीं है?" भरत ने हँसते हुए पूछा।

"यह ताल मेरा है। यहाँ तक पहुँचने के लिए मैने ही रास्ता बनाया है।" मल्ली ने कहा।

“आगे तुम यह कहोगी कि यह सारा समुद्र तुम्हारा है; पर यह सबका है।" भरत ने कहा।

"हवा सबकी है, इसलिए अगर तुम्हारी छत पर चढ़कर कोई हवा ले तो क्या तुम उसे वैसा करने दोगे?" मल्ली ने पूछा।

"चाहती हो तो पटवारी से शिकायत कर दो। मैं यहाँ से काई लेकर ही रहूँगा।" भरत ने कहा।

मल्ली ने पटवारी से जाकर शिकायत की।

"भरत की बात झूठी न थी। अगर तू कहे कि उस ताल की सारी काई तेरी है तो कोई फायदा नहीं। उस काई को लेने का सबको अधिकार है।" पटवारी ने उसको समझाकर बताया।

"उस ताल के लिए कोई रास्ता न था। हमारे घर के सामने जो रास्ता है, वही उसका रास्ता है। क्या सबको हमारी जमीन में से जाने का भी हक है?" मल्ली ने पूछा। उसने यह भी कहा कि भरत के पिता ने मुझ से सस्ते में काई खरीदनी चाही, जब मैंने न दी तो उसने काई जमा करने के लिए अपना लड़का भेज दिया।



सब सुनकर पटवारी ने कहा- "मल्ली, इस छोटी सी बात पर क्यों बड़ों का वैर मोल लेती हो? उस ताल में, सुना है, बहुत काई है। जितना तू चाहती है उतना ले ले, जितना वह चाहेगा वह ले लेगा।" मल्ली को यह फैसला सुनकर बड़ा गुस्सा आया।

"जो कोई उस ताल में पैर रखेगा, उसके पैर टूट जायेंगे, तब जाकर लोगों को अक्ल आयेगी।" जो कोई गाँव में दीखा उसको मल्ली ने यह कहा। कहकर वह घर चली गई।

भरत ने, बाद में, मल्ली से सुलह करनी चाही।

"हम फालतू क्यों लड़ें झगड़ें? तुम लड़की हो, मैं लड़का हूँ। जो काई तेरी पहुँच में होगी मैं उसे न लूँगा। दूर दूर के पत्थरों पर अटकी काई को मैं इकट्ठा कर लूँगा। इस तरह हम दोनों का काम बन जायेगा। और हम चैन से रह सकेंगे।" भरत ने कहा।

"ये बातें न बनाओ। तेरी और मेरी दोस्ती का क्या मतलब? तू तो ताल के बारे में कुछ जानता भालता नहीं। उसमें





तू जितनी दूर जा सकता है, मैं उससे दूर जा सकती हूँ।" मल्ली ने कहा।

"अच्छा, तो देखें!" भरत ने कहा।

"अगर तू बेवकूफी करके अन्दर गया और किसी भँवर में फँस गया, और हाय हाय करने लगा तो मैं तुझे निकालने नहीं आऊँगी।" मल्ली ने उसे डराया।

भरत ठहका कर हँसा। काफी समय बीत गया। एक दिन खूब बदली छाई। हवा चलने लगी। तूफान की आशङ्का बढ़ गई। इसलिए वह अपनी लकड़ी लेकर बड़े तड़के ही ताल पर चली गई। जब वह वहाँ पहुँची तो भरत वहाँ पहले से ही मौजूद था।

समुद्र में बड़ी बड़ी लहरें उठ रही थीं। रिमझिम रिमझिम भी शुरू हो गई थी। भरत एक पत्थर पर खड़ा होकर देखने लगा कि काई के लिए वह कितनी दूर जा सकता है। वह जितनी भी दूर जाये, मल्ली ने उससे आगे जाने का निश्चय किया। भरत एक पत्थर से, दूसरे पत्थर पर उत्तर की ओर इस तरह जा रहा था, जैसे कुछ निश्चय कर लिया हो। मल्ली का मन सन्तुष्ट हुआ क्यों कि उस तरफ वह भँवर भी थी, जिसके बारे में उसने कहा था। मल्ली आस पास की काई लकड़ी से इकट्ठा करने लगी। भरत भी दूरी पर काई जमा करने लगा। मल्ली ने देखा कि उसके ढेर से, उसका ढेर बहुत छोटा था। जब उसकी लकड़ी में काई फँसती तो मल्ली जोर से हँसती। भरत भी चिढ़ने लगा। उसने मल्ली से अधिक काई इकट्ठी करने की सोची।

इतने में उसकी नजर भँवर पर पड़ी। उसमें काई लगातार चक्कर लगा रही थी। वहाँ काई इतनी मोटी थी कि आदमी मानों

उस पर तैर सकता था। मल्ली जानती थी कि उस भँवर में से काई निकालना कितना मुश्किल था। वह कभी उसके पास भी न गई थी। उसके चारों ओर जो पत्थर थे, वे बहुत फिसलनदार थे। भाटे में भी वहाँ से पानी पूरी तरह न हटता था।

भरत मुश्किल से उन पत्थरों पर गया। बैठते उठते उसने कठिनाई से लकड़ी से थोड़ी काई जमा की। पर उसने लकड़ी उठाई ही थी कि उसका पैर फिसल गया, परन्तु जैसे तैसे भरत भँवर में गिरने से बच गया।

"क्या तेरी अक्ल मारी गई है? अगर तू उसमें गिरा तो मर मरा जायेगा।" मल्ली चिल्लाई।

"तुम अपना काम देखो, तुम्हे मुझ से क्या वास्ता?" भरत ने कहा।

"हाँ! मुझे तुम से क्या वास्ता ?" कहती वह अपनी लकड़ी लेकर काई इकट्ठा करने लगी। इतने में उसे ऐसा शब्द सुनाई दिया मानों कोई भँवर में गिर पड़ा हो। जब उसने सिर उठाकर देखा तो भरत न था। उसका शरीर भँवर में चक्कर काट रहा था।



वह रेंगती रेंगती भँवर के पास गई। भरत एक बार तैरता दिखाई दिया। उसके माथे पर चोट लगी हुयी थी, ओर खून बह रहा था। जब वह पास आया तो उसने उसका कुर्ता पकड़ लिया। और उसे लकड़ी देते हुये उसने कहा-"इस लकड़ी को जोर से पकड़ लो।" उसमें अभी होश थी। उसने लकड़ी पकड़ ली। फिर मल्ली ने उसको पत्थरों पर खींच लिया।

मल्ली को न सूझा कि वह क्या करे। समुद्र में ज्वार आ रहा था। अगर उसको

वहाँ से न हटाया गया तो जल्दी ही आस पास के इलाके में पानी पूरी तरह भर जायेगा। न जाने उसमें कहाँ से उतनी शक्ति आ गई। वह उसको उठाकर, हाँफती हाँफती अपने झोपडे में पहुँची। भरत में तब होश न थी। उसका मुँह बिल्कुल निष्प्राण-सा हो गया था। उसको देखकर बूढ़े ने कहा-"मल्ली, लगता है, यह मर गया है।"

"नहीं, दादा! मैं गाँव जाकर उसके आदमियों को बुलाकर लाती हूँ। शायद वे इसे जिला लें।" मल्ली ने कहा।

"वाह, ऐसी मूर्खता का काम न कर। वे कहेंगे, हमने ही इसे बदला लेने के लिए मारा है।" बूढ़े ने कहा।

मल्ली यकायक घबरा गई। परन्तु फिर उसने कहा-"कहते हैं तो कहें।" कहती वह गाँव को ओर भागी।

जल्दी ही, भरत के माँ बाप और नौकर भागे भागे आये। माँ भरत पर गिरकर चिल्लाने लगी-"अरे! इन लोगों ने तुझे अपने पेट में रख लिया है।" भरत के पिता ने उसको रोकते हुये कहा-"जिसने मेरे लड़के की यह हालत



की है, क्या उनका खून लिये बगैर मैं रहूँगा?"

मल्ली का मानों कलेजा थम गया। जो दादा ने कहा था, वही हो रहा था? भरत शायद न जिये। क्या हत्या का अपराध उस पर थोपा जायेगा? इसकी क्या गवाही है कि उसके प्राण बचाने के लिए उसने अपने प्राणों की भी परवाह न की थी।

अपने बेहोश लड़के और मल्ली को लेकर भरत के माता पिता गाँव गये। वहाँ उन्होंने मल्ली को पटवारी के हवाले कर दिया। उसने रात भर उसको जेल में रखा।

रात में भरत ने कराहते कराहते आखें खोलीं। "क्या बेटा?" उसकी माँ ने पास आकर पूछा। उसने इस तरह चारों ओर देखा जैसे वह किसी को खोज रहा हो। उसे होश में आया देख माँ बाप बड़े खुश हुये। वैद्य ने बताया कि वह जीवित हो सकेगा।

अगले दिन भरत का पिता मल्ली को देखने जेल में गया। मल्ली उसे देखकर चकित हुयी। "बेटी, भरत तेरे सपने ले



रहा है। बिना तुझे देखे, वह नहीं सोयेगा। एक बार हमारे घर आ।" मल्ली गई। उसको देखकर भरत बड़ा प्रसन्न हुआ। धीमे धीमे भरत ठीक हो गया। उसकी, मल्ली के साथ शादी हो गई। मल्ली ने अपना झोंपड़ा छोड़ दिया। उसने अपने ससुर के बड़े पर में पैर रखा।

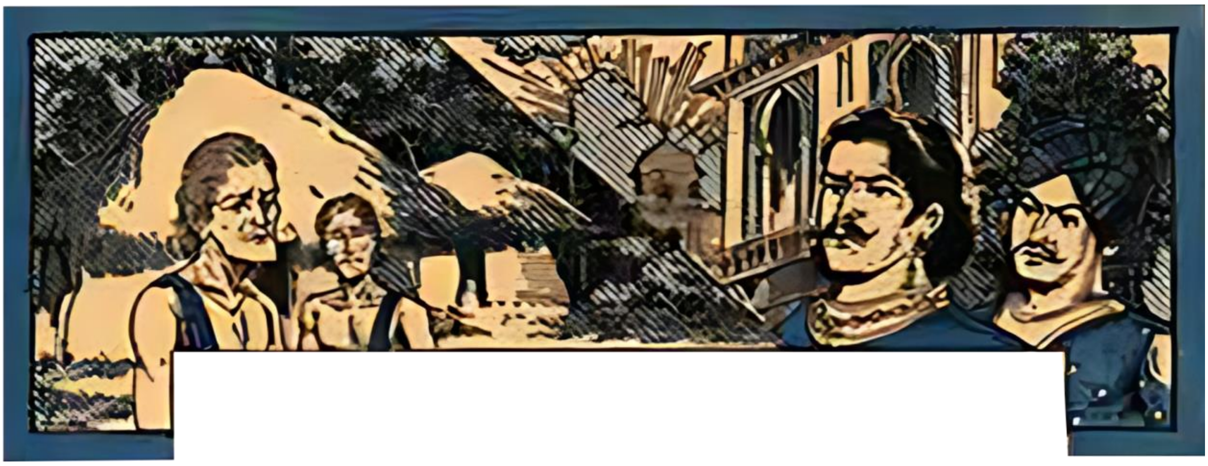
बेताल ने कथा सुनाकर कहा-"राजा! मुझे एक ही सन्देह है। दादा के यह कहने पर भी कि तुम पर हत्या का अपराध थोपा जायेगा, मल्ली बिना झिझके भरत के माँ-बाप के पास क्यों गई? क्या उसे भारत पर प्रेम था? उसी की वजह से वह इतनी दूर हो गया था, क्या इसके पश्चाताप के कारण? इनका उत्तर तुमने जानबूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"मल्ली का, भरत से उस थोड़े समय में प्रेम हो जाने का कोई कारण नहीं है। ठीक समय पर उसमें उसके प्राण बचाने का उत्तम विचार उठा। और जो पुण्य कार्य करने निकलते हैं, वे किसी बिघ्न की परवाह नहीं करते। बड़े से बड़ा त्याग करते हैं। इसलिये मल्ली भँवर के पास गई। उसने उसे भँवर में से तो बचा लिया, पर वह उसको खतरे से न बचा सकी। वह काम भरत के माँ-बाप ही कर सकते थे। इसलिये वह उन्हें बुलाने गई। अपनी प्राणों की परवाह किये बिना भरत को भँवर से निकालने वाली मल्ली को हत्यारा कहे जाने का यदि भय रहा हो, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है।" विक्रमार्क ने कहा।

इस प्रकार राजा का मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जाकर बैठ गया।

(कल्पित)





विष्णु के आदेश के अनुसार ब्रह्मा ने सृष्टि का निर्माण किया। सृष्टि के पूर्ण होने के बाद उसने कई गुणों को बनाकर कहा-"तुम मानवों के साथ रहकर उनकी सहायता करो।" उनको उसने भूमि पर भेज दिया।

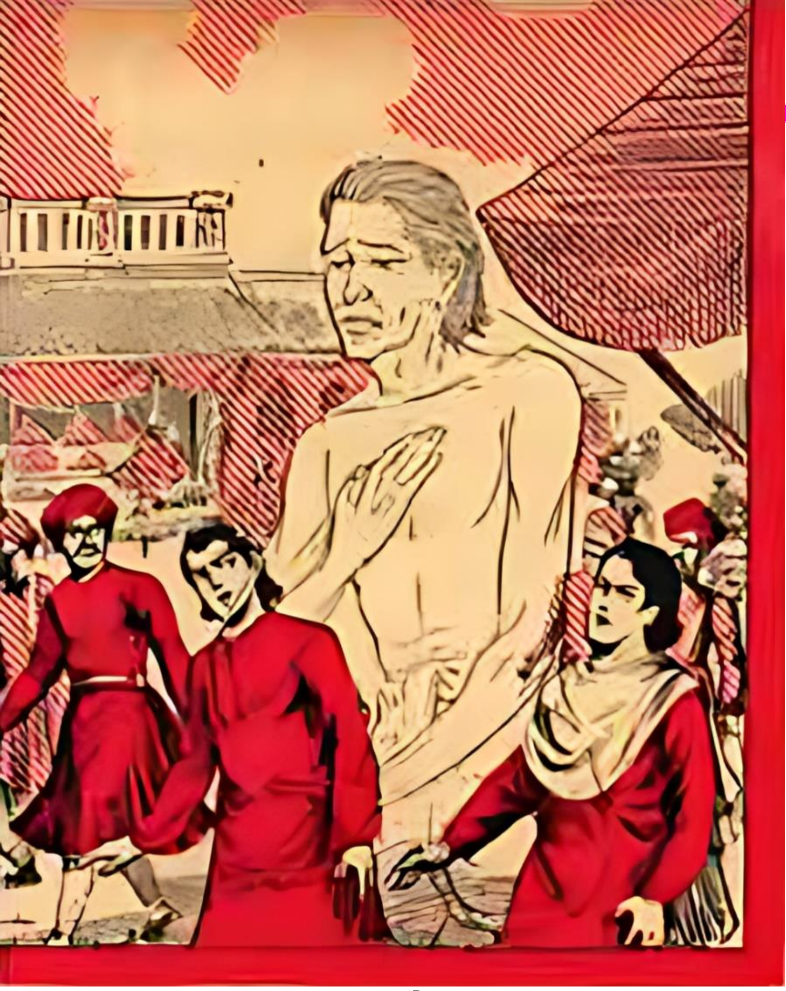
जब वे पहले पहल पृथ्वी पर आये तो देखने में वे सब गुण एक जैसे ही लगते थे यद्यपि उनकी प्रकृति भिन्न भिन्न थी। पर सबकी आपस में मैत्री थी। वे साथ रहते, साथ घूमते-फिरते, साथ खाते-पीते।

परन्तु कुछ दिनों बाद उनकी मैत्री मैं दरारें पड़ने लगी। कई गुणों का प्रभाव कम होने लगा। उनका जीवन दुःखमय होने लगा। उनकी पूछताछ भी कम होती। कहीं कहीं तो लोग उनको बुरा भला भी कहने लगे थे। वे सद्गुण थे।

उसी समय दुर्गुणों का प्रभाव बढ़ता गया। उनका जीवन फलने-फूलने लगा। जहाँ देखो उन्हीं का आदर सम्मान होता। उन्हीं की पूछ होती।

ज्यों ज्यों यह परिवर्तन बढ़ता गया, त्यों त्यों सद्गुणों ने दुर्गुणों के साथ रहना-सहना बन्द कर दिया। उन्होंने अपने लिए अलग जगह ढूँढ ली। परन्तु वह सुन्दर जगह न थी, न समृद्ध ही। दुर्गुण अच्छे अच्छे कपड़े पहनते, बड़े बड़े मकानों में रहते, खूब खाते-पीते, जहाँ जी चाहता वहाँ घूमते-फिरते। जो चाहते वह करते।

एक दिन सद्गुणों की एक सभा हुई। उसमें वे अपनी बुरी हालत पर चर्चा करने लगे।



"हम सद्‌गुण हैं न! हमारी दुःस्थिति का क्या कारण है? न रहने के लिए अच्छे घर हैं, न खाने के लिए उत्तम भोजन ही। हम जहाँ कहीं भी जाते हैं, तो सब कोई हम पर नाक भौं चढ़ाता है। उन दुर्गुणों को देखिए। उनके वैभव के बारे में कहा नहीं जा सकता। वे दुनियाँ भर में घूमते हैं और सब जगह उनका स्वागत-सत्कार होता है।" धर्म ने ऊँची आवाज़ में कहा।

"वे रेशमी कपड़े पहनते हैं। पापी उनकी आवभगत करते हैं, यह सोचकर दुखी होना ठीक नहीं है। पुण्यात्मा सब हमारी ही गुण प्रशंसा कर रहे हैं। वे भी जो पुण्यात्मा नहीं हैं, ग्रन्थों में यह ही लिख रहे हैं कि हम अच्छे हैं। संसार का बड़े से बड़ा ग्रन्थ उठाकर देखिए, उसमें हमारी ही प्रशंसा की गई है। क्या हमारे लिए यह काफी नहीं है?" सन्तोष ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा।

"इन ग्रन्थों को कोई नहीं पड़ता पढ़ाता। उनमें दीमक लग रही है। जितना संसार में हमारा आदर होता है, उतना ही हमारी प्रशंसा करनेवाली पुस्तकों का होता है।"

"इसलिए हमें यह करना होगा कि हम लोगों के पास जायें, उनका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करें और दुर्गुणों का प्रभाव संसार से हटायें। इसी काम के लिए ब्रह्मा ने हमें यहाँ भेजा है। हमारी कोई पूछ नहीं कर रहा है, इसलिए संसार से हमारा दूर जाना भारी गलती है।" दीक्षा ने सलाह दी।

इसका सब सद्‌गुणों ने आमोदन किया। उसकी सलाह पर वे एक जन संकुल नगर में गये। और आते जातों से कहने

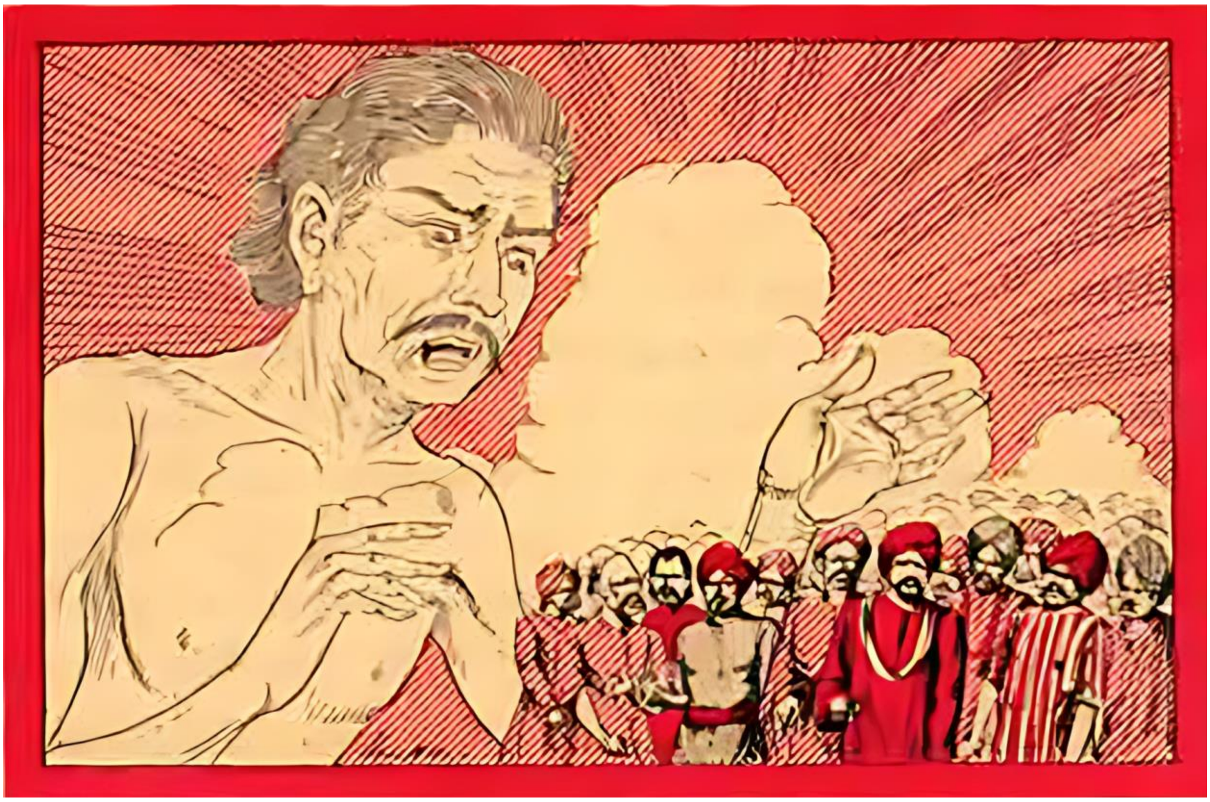
लगे-"हम सद्गुण हैं! आपके हमें न अपनाने के कारण हमारी यह बुरी हालत हुई है। कम से कम अब आप दुर्गुणों को छोड़कर हमें अपनाइये और अपने जीवन को सार्थक बनाइये।"

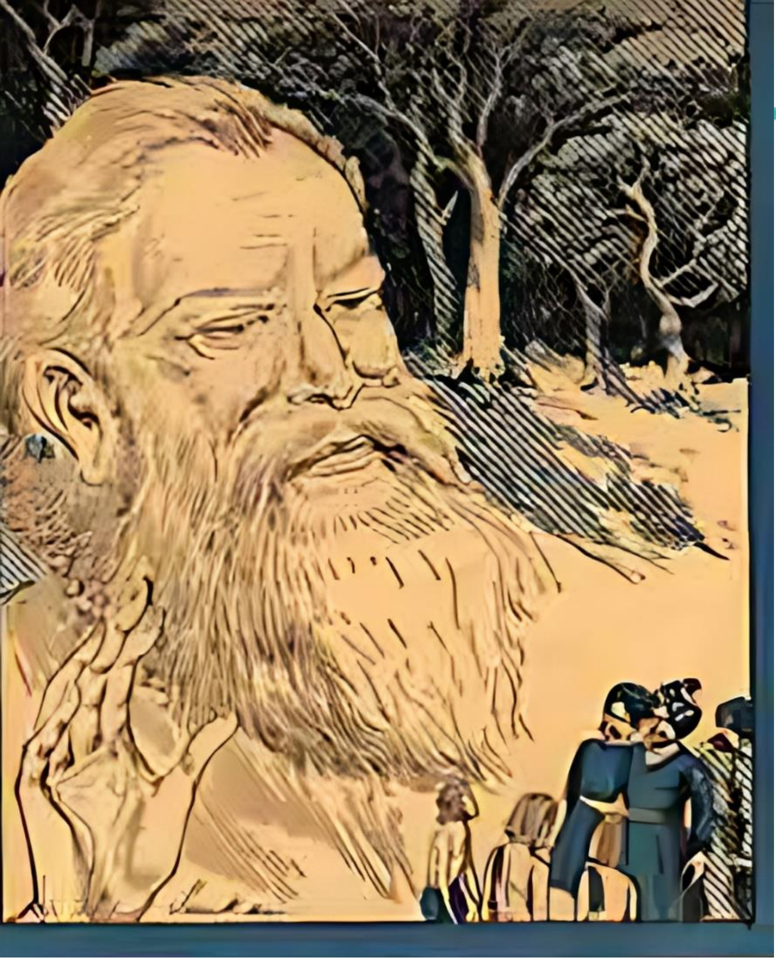
"अरे, तुम कहाँ से आ मरे? दो तीन सद्गुणों से ही यहाँ आफत आई हुई है, और तुम सब क्यों आ गये? जाओ, जाओ, कहीं और जगह देखो।" कहकर लोगों ने सद्गुणों को दुत्कारा।

बाकी सद्गुणों ने न्याय की ओर मुड़कर कहा-"यह क्या अन्याय है; तेरे नाम पर यहाँ कितने ही कर्मचारी, सिपाही, काम कर रहे हैं। क्या तुम यह नहीं कर सकते कि लोग हमें दुत्कारे, फटकारें न?"

न्याय ने लज्जावश सिर झुका कर कहा-"भाइयों और बहनों, न्यायाधिकारी और सैनिक मेरे हाथ में होते तो मैं आपके साथ इस तरह क्यों दर दर भटकता? क्या मैं आपको भी बड़ी बड़ी जगह पर न नियुक्त करता?"

"अब हमें क्या करना चाहिये?" यह विकट समस्या सद्गुणों के सामने थी। वे सोच में थे।





"मैं बताता हूँ। सुनिये इस संसार में दुर्गुण रहेंगे नहीं तो हम। इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है। वे खा पीकर मुटिया गये हैं तो क्या हुआ? भले ही हम दुबले पतले हो, हम में आत्मबल है। यदि हमने उन दुर्गुणों से युद्ध किया तो जरूर हमारी विजय होगी। इस संसार में, दुर्गुणों का नामो निशान मिटाकर, आओ, हम स्वर्ग की स्थापना करें। तभी हम सृष्टिकर्ता के प्रति अपना कर्तव्य निभा सकेंगे।" आदर्श ने जोश के साथ कहा।

सद्गुणों ने यह सुन करतल ध्वनि की। आदर्श को अपना नेता चुनकर उन्होंने दुर्गुणों पर धावा बोल दिया। दुर्गुण युद्ध की घोषणा सुनकर, सद्गुणों से कलई मिलाने निकले। एक वन में, दोनों में घमासान युद्ध हुआ। यह युद्ध बहुत देर तक चलता रहा; पर किसी पक्ष की विजय न हुयी। और युद्ध खतम होता भी नजर न आता था। उसी वन में एक तत्वज्ञानी रहा करते थे। युद्ध का कोलाहल सुनकर, वे अपना चिन्तन छोड़कर, उस स्थल पर गये जहाँ सुगुणों और दुर्गुणों का भयङ्कर युद्ध हो रहा था।

"क्या तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है? क्यों यों युद्ध कर रहे हो?" तत्वज्ञानी ने दोनों पक्षवालों से पूछा।

"संसार में दुर्गुणों को निर्मूल करना हमारा कर्तव्य है। ये मनुष्यों को अपनी ओर आकृष्ट करके पापों को प्रोत्साहित कर रहे हैं। इनको परास्त कर हम संसार में पुण्य का प्रतिष्ठापन करना चाहते हैं।" सद्गुणों ने कहा।

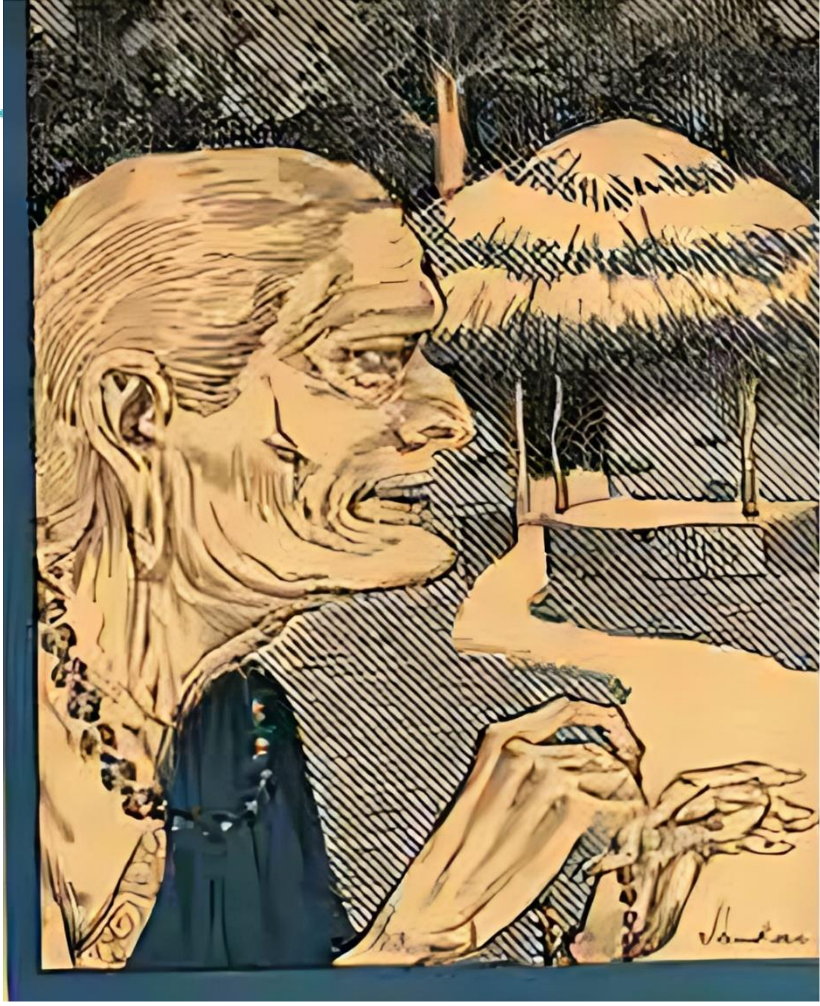
"इनकी किसी ने देखभाल नहीं की, दर दर भटकते रहे, अब चिढ़कर, हम पर

तलवार उठाकर आये हैं। वस्तुतः हम ही संसार के शासक हैं, यह दिखाने के लिए हम युद्ध कर रहे हैं।" दुर्गुणों ने बढ़कर कहा।

"आप सब मूर्ख हैं। आप में न एक बड़ा है न एक कम। जब ब्रह्मा ने आपका निर्माण किया था, तब आप दोनों समान थे। यह भेद-भाव आपका ही बनाया हुआ है। सद्‌गुणों ने सोचा कि वे बड़े हैं। दुर्गुणों ने सोचा कि वे अधिक शक्तिशाली हैं। वास्ताविक तत्वज्ञानी के लिए पुण्य-पाप दोनों ही एक हैं। वह सद्‌गुण व दुर्गुण दोनों से परे हैं। इसलिए आप यह व्यर्थ का कलह छोड़िये और मैत्री पूर्वक रहिये।" तत्वज्ञानी ने कहा।

तुरन्त दोनों पक्षों ने युद्ध छोड़ दिया। पर सन्धि कैसे की जाय? किसको दूत बनाकर भेजा जाय? क्या दुर्गुण सन्धि के लिए मानेंगे? ये समस्यायें उनके सामने उपस्थित हुई।

"दुर्गुण उतने ठाट-बाट से नहीं जी रहे हैं, जितना कि हम सोच रहे हैं। लोग उनको सावधानी से देख रहे हैं। कितनी ही बार उन्होंने रिश्वते



दीं। कितनी ही बार वे अपमानित हुये। अनीति को कई बार जेल में रखा गया। काम को कई बार जूतियाँ खानी पड़ीं। इसलिये वे हमसे सन्धि किये बगैर न रहेंगे।" विवेक ने कहा।

सब दृष्टियों से सदाचार को दूत होने के लिए उपयुक्त समझा गया। वह बूढ़ा था। सब उसका आदर करते। वह भी ओर सद्‌गुणों की तरह था, वह भी प्रायः झोपड़ियों में रहा करता था। रईस यद्यपि उसको अपने मकानों में न रखते थे। तो भी जब वह आता था, तो उसका

सम्मान करते थे। इसलिए सद्‌गुणों ने सदाचार को भेजने का निश्चय किया। परन्तु दुर्गुणों को सदाचार की बिल्कुल परवाह न थी। उसकी आड़ में वे जो कुछ चाहते, करते। उसे देखते ही वे कहते-"छी छी, अपना मुँह न दिखा! तू शुरू से ही हमारा किसी न किसी बहाने उपयोग करता ही आया है। तू हमसे क्या सन्धि-सुलह करेगा?" उसे उन्होंने भगा दिया।

सद्‌गुण न सोच पाये कि क्या किया जाय। वे जब इस हालत में थे, तो उनके बीच एक विचित्र प्राणी आया, वह प्राणी नर था या मादा वे न जान सके। वह सद्‌गुणों के साथ रहता, पर उनके सुख दुख में हिस्सा न लेता। वह देखने में बहुत गम्भीर, सभ्य मालूम होता था।

"तुम दोनों में में सुलह करवा दूँगा। उसके बाद तुम में किसी प्रकार के झगड़े फसाद न होंगे। तुम दोनों में आदर व्यवहार बढ़ेगा।" नये गुण ने कहा। इस गुण का नाम कपट था।

सद्‌गुण यह मान गये। कपट को देखते ही दुर्गुणों को भी अचरज हुआ। क्योंकि कपट के चाल ढाल कुछ ऐसे थे जो किसी और में न थे। सच कहा जाय तो दुर्गुण, सब भद्दे से थे। कपट बड़ा नाजुक, सभ्य था।

कपट ने आसानी से दुर्गुण और सुगुणों में सुलह कर दी। उस दिन से नई सभ्यता प्रारम्भ हुयी। अब भी जब कभी कोई दुर्गुण, या सुगुण किसी से मैत्री करना चाहते हैं तो साथ कपट ले जाते हैं। इस तरह न सद्‌गुणों की ख्याति कम होती है, न दुर्गुणों का प्रभाव ही कम। इसलिए अन्तिम विजय कपट की हुयी।





[६]

[रूपधर एक वर्ष तक सुकेशिनी का अतिथि बनकर रहा। अपने अनुयायियों के दबाव पर फिर उसने घर वापस जाने का निश्चय किया। सुकेशिनी की सलाह पर वह यमलोक गया। वहाँ उसको अपनी माँ का प्रेत दिखाई दिया। उसने उससे अपने घर के हाल चाल जाने।]

रूपधर जब अपनी माँ से बातें कर रहा था, तब और कई प्रेत आकर बलि खाने लगे। रूपधर ने सबसे परिचय किया। उनमें नवद्योत की माँ और भुवन सुन्दरी की माँ भी थीं।

बलि खाकर बहुत से प्रेत चले गये। इतने में वहाँ राजा का प्रेत आया। बलि खाने के बाद, राजा, रूपधर को पहचान कर खूब रोया। उसने प्रेम से रूपधर की और हाथ बढ़ाये। परन्तु प्रेत के लिए जीवित व्यक्ति का आलिङ्गन करना सम्भव न था।

रूपधर ने आश्चर्य से पूछा-"प्रभु, आप यहाँ कब आये? कैसे आये?"

"दुष्ट अज्वल और मेरी पत्नी ने मुझे मारने की साजिश की। मुझे दाबत के लिए बुलाया और भोजन के समय मेरी हत्या कर दी। मेरे साथ मेरे नौकर चाकरों



को भी मार दिया। तुमने युद्धों में बहुतों को मरता देखा होगा, पर भोजन के समय इतने लोगों की हत्या के भयङ्कर दृश्य का तुम अनुमान भी न कर सकोगे।" राजा ने कहा।

"हाँ, राजा। स्त्री की बुद्धि विनाशकारी है। आपके युद्ध से लौटने के पहले ही आपकी पत्नी ने आपको मरवाने की साजिश की होगी। स्त्री का विश्वास नहीं करना चाहिये। भुवन सुन्दरी को ही देखिये। उसके लिए कितने आदमियों को मरना पड़ा?" रूपधर ने कहा।

"परन्तु तेरी स्त्री बहुत पतिब्रता है। जब तू युद्ध के लिए निकला था, वह नई दुल्हन सी थी। तभी लड़का पैदा हुआ था। अब तो वह काफी बड़ा हो गया होगा।" राजा ने कहा।

वे इस प्रकार बातें कर रहे थे कि. वहाँ बज्रकाय और पितृकीर्ति प्रेत के रूप में आये। ट्रोय युद्ध में मृत और भी योद्धा आये।

वज्रकाय ने रूपधर को ज्यों ही पहचाना त्यों ही वह बहुत सारी बातें पूछने लगा। "क्या मेरा लड़का अच्छा है? वह कैसा योद्धा है?"

"तेरा लड़का नवद्योत बहुत पराक्रमी है। मुझे छोड़कर, नवद्योत के समान व्यूह रचने वाला कोई नहीं है। उसने कितने ही पराक्रमियों को परास्त किया। जो काठ के घोड़े में गये थे, उनमें वह ही एक था जो भय से काँपा न था। वही एक ऐसा था जो तलवार लेकर तैयार बैठा था और ट्रोय नगर पर हमला करने का हुक्म पाने के लिए उतावला हो रहा था। युद्ध में कितने मारे गये, कितने घायल हुये, यह तो मैं नहीं बता सकता हूँ।

नवद्योत को एक छोटा-सा घाव भी न लगा।" रूपधर ने बताया।

यह सुन बज्रकाय का प्रेत बड़ा प्रसन्न हुआ। वह चला गया। जिन सब को देखना था, उन सब को रूपधर ने देखा। अपनी नौका में आकर उसने वापसी यात्रा शुरू कर दी। जल्दी ही नौका सुकेशिनी के द्वीप में पहुँची।

सुकेशिनी ने रूपधर और उसके साथियों को निमन्त्रित करते हुए कहा-"तुम भी खूब हो। सब तो एक ही बार यम लोक जाते हैं पर तुम्हें दूसरी बार भी जाना होगा। आज आप सब हमारे यहाँ रहिये। खूब खाइये, पीजिये। कल सवेरे उठकर चले जाना।"

ग्रीकों ने सारा दिन खाने पीने में खर्च किया। अन्धेरा होते ही सिवाय रूपधर के सब नौका के पास गये और उसके पास की रेत पर सो गये। रूपधर सुकेशिनी के घर ही रहा। उसने यमलोक में जो कुछ देखा था उसको सुनाया।

सब सुनकर सुकेशिनी ने यों कहा-"वह सब तो गुजरी हुई बात है। अब जो करना है वह बताती हूँ। ध्यान से सुनो। तुझे पहले पहल नागकन्यायें



दिखाई देंगी। उनके गले में सम्मोहन शक्ति है। जो उनकी आवाज सुनते हैं, बस, उनकी आयु खतम ही समझो। इसलिए उनके द्वीप में जाने से पहले ही तुम अपने अनुयायियों के कान अच्छी तरह बन्द कर दो ताकि वे नागकन्याओं का सङ्गीत न सुनें।

अगर तू उनका सङ्गीत सुनना चाहता है तो तेरे अनुयायियों को तुझे मस्तूल से बाँध देना चाहिये। चाहे तू कितना ही चिल्लाये, उनसे कह देना कि वे तुझे न छोड़े। तब तू उनका सङ्गीत सुन सकता

है। इससे तुम पर कोई आपत्ति न आयेगी। नागकन्याओं के द्वीप के बाद जब तुझे उनकी आवाज न सुनाई देगी, तब तुझे समुद्र में दो रास्ते दिखाई देंगे। इनमें से तू कौन सा रास्ता लेगा, में नहीं कह सकती। एक रास्ता दो पहाड़ों के बीच में से होगा। उन पहाड़ों के बीच, अगर कोई पक्षी भी गुजरे तो वे दोनों आपस में टकराते है और उसको मार देते हैं। वे हिलते डुलते पहाड़ हैं। उनके बीच में कोई नौका गई हो और वह नष्ट न हुयी हो, यह कभी न सुना गया।

तेरा दूसरा रास्ता विध्वसनी पर्वत की बगल में से होगा। यह पर्वत बहुत ऊँचा है। उसकी चोटी हमेशा बादलों से ढकी रहती है। उस पहाड़ की चोटी पर अभी तक कोई नहीं चढ़ सका है क्यों कि वह पर्वत बहुत फिसलनदार है। जो कोई उस पर पैर रखता है, वह फिसल जाता है। उस पर्वत में एक गुफा है। उसका मुख पश्चिम की ओर है। उस गुफा में विध्वसनी नाम की एक राक्षसी रहती है। वह कुत्ते के बच्चे की तरह कुनकुनायेगी। पर उस आवाज से डर लगता है। उस राक्षसी



के बारह पैर, और छः सिर हैं। उसके छहों गले बहुत लम्बे हैं। उसकी गुफा समुद्र के किनारे से काफी ऊँची है। अच्छे से अच्छा तीरन्दाज वहाँ तक बाण नहीं मार सकता। फिर भी विध्वंसिनी अपनी कमर बाहर निकालकर समुद्र में से मछली अपने मुख में पकड़ सकती है। उसकी पहुँच में जाकर कोई नाविक जीवित बचा हो, यह कभी न सुना गया। इस पर्वत के पास एक बड़ी भँवर है। इस भँवर में फँसी नौका को नष्ट होने से बचाने की शक्ति भगवान में भी नहीं है। अपनी नौका को इस भँवर में ले जाने की अपेक्षा विध्वंसनी पहाड़ के किनारे किनारे ले जाना ही बेहतर है। अगर नौका तेजी से गई तो विध्वंसिनी, अपने छः मुखों से छः को ही पकड़ सकती है। बाकी तो बचकर निकल सकेंगे। भँवर में यदि नौका फँस गई तो उसका नामोनिशान भी न रहेगा। सब खतम हो जायेंगे।

फिर तुम त्रिनाशिया द्वीप में पहुँचोगे। वहाँ सूर्य भगवान, गौ, भेड़ों के झुण्ड के झुण्ड होंगे। पचास पचास गौवों के सात झुण्ड होंगे। साथ ही भेड़ों के झुण्ड होंगे। उनको सूर्य की दो लड़कियाँ चरा





रही होगी। वे झुण्ड, मृत्यु और जन्म से परे हैं। न तुम न तुम्हारे सैनिक ही उनके पास जायें। अगर वे गये तो नौका और तुम्हारे अनुयायी सब नष्ट हो जायेंगे। कष्ट तो तुम्हें झेलने ही होंगे। पर तुम उनको व्यर्थ बढ़ाओ न।"

सुकेशिनी के यह कहते कहते पूर्व में सूर्य निकलने लगा। रूपधर ने नौका के पास जाकर अपने अनुयायियों को उठाया। जल्दी ही नाविकों ने लङ्गर उठाकर नौका चलाई। सुकेशिनी के कृपा के कारण अनुकूल हवा बहने लगी।

पहला पहल खतरा नागकन्याओं का था। इसलिये रूपधर ने अपने सैनिको को उनके बारे में बताया, जो सुकेशिनी ते बताया था। उसने उनके कान बन्द कर दिये। बहरा-सा बना दिया। फिर उन्होंने रूपधर को मस्तूल से बाँध दिया।

"अगर मैं मस्तूल से छूटना चाहूँ, तो मुझे और जोर से बाँध देना।" उसने अपने सैनिकों से पहले ही अच्छी तरह आगाह कर दिया।

रूपधर की नौका को देखते ही, नागकन्यायें अपने द्वीप से गाने लगीं। वे रूपधर को सम्बोधित करके, मीठे मीठे गाने उसको सुनाने लगी। क्यों ज्यों, उनका सङ्गीत रूपधर ने सुनना चाहा, उसकी सुनने की इच्छा और बढ़ती जाती थी। उसने अपने अनुयायियों से कहा कि ये उसे छोड़ दें। उसको, उन्होंने और जोर से बाँध दिया। उन्होंने उसकी एक न सुनी।

थोड़ी देर में नौका दूर चली गई। नागकन्याओं का सङ्गीत सुनाई देना बन्द हो गया। तब रूपधर के सैनिकों ने अपने कान खोल लिये। रूपधर को भी खोल

दिया। इतने में, रूपधर को कुछ दूरी पर एक बड़ी तेजी से घूमती भँवर दिखाई दी। उसे देखकर रूपधर के सैनिक डर गये।

"तुम रो मत। यह भाललोचन की आपति से कोई बड़ी आपत्ति नहीं है। नौका को, जो वह पहाड़ दिखाई दे रहा है, उसके पास से ले जाओ।" रूपधर ने कहा।

उसने, अपने सैनिकों को पहाड़ की गुफा में रहनेवाली विध्वंसिनी राक्षसी के बारे में न बताया। अगर बताता तो वे भय से चप्पू दूर फेंक देते। रूपधर ने गौर से पहाड़ की ओर देखा। क्यों कि पहाड़ पर बादल थे, इसलिये वह न राक्षसी को देख सका न उसकी गुफा को ही। औरों की नजरें भँवर पर ही गड़ी थीं। सब भयभीत थे।

इतने में, राक्षसी अपने छहों सिर बाहर करके रूपधर के छः सैनिकों को उठाकर ले गई। थोड़ी देर बाद नौका पहाड़ से आगे निकल गई।

रूपधर ने पास में एक सुन्दर द्वीप देखा। उस द्वीप से गौवों का



चिल्लाना, और भेड़ों का मिमियाना सुनाई पड़ रहा था। वह ही सूर्य भगवान का द्वीप था।

यह देखते ही, रूपधर को साङ्केतिक और सुकेशिनी की बातें सहसा स्मरण हो आई। उसने भयभीत हो अपने अनुचरों से इसप्रकार कहा।

"मित्रो, इस सुन्दर द्वीप में, पैर रखना हमारे भाग्य में नहीं लिखा है। मैं जानता हूँ कि आप सब थक गये हैं और सुस्ताने की सोच रहे हैं। पर मुझे साङ्केतिक और सुकेशिनी ने बताया है कि यदि हमने इस

द्वीप पर पैर रखा तो हम पर बड़ी आपत्ति आयेगी। इसलिये नौका को इस द्वीप से दूर ही दूर ले जाओ।"

रूपधर की यह बात सुन उसके सैनिक पसीने पसीने हो गये। मायाबी को गुस्सा आ गया। उसने कहा-"रूपधर तू मनुष्य नहीं, पत्थर है। तुम्हें न आराम की जरूरत है न चैन की। तुम्हारे आदमी, खाये, पिये, सोये बगैर मरने को तैयार हैं और तुम कहते हो कि किनारे पर नहीं जाना चाहिये। खाना पकाकर पेट भर खाने नहीं दे रहे हो। अब रात भी आ रही है। हो सकता है कि रात में तूफान आये। अगर तूफान आया तो हमारी समुद्र में क्या गति होगी? चाहे तू कुछ भी कर; हम आज रात को, द्वीप के किनारे जाकर खाना पकाकर, खाकर ही रहेंगे। जरूरत पड़ी तो कल सवेरे ही फिर यात्रा पर निकल पड़ेंगे।"

यह सुन और खुश हुये। रूपधर ने सोचा कि विधि से बचना असम्भव था। उसने मायाबी से कहा-"अगर सबकी यही राय है तो मैं कुछ नहीं कर सकता। पर तुमको यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि यदि तुम गौ या भेड़ देखोगे तो उनको छुओगे तक नहीं। हममें से किसी को भी गौ या मेड़ को मारने की कोशिश नहीं करनी चाहिये। हमें सुकेशिनी के दिए हुए भोजन के अतिरिक्त कुछ नहीं छूना चाहिए। अगर तुमने यह प्रतिज्ञा की तो तुम्हारे उस द्वीप में उतरने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

सबने इस प्रकार की प्रतिज्ञा की।

(अभी और है)





[४]

[मोरोको का जादूगर अलादीन को गुफा में छोड़ गया था। पर अलादीन उसकी दी हुई अंगूठी के भूत की मदद से घर चला आया था। अद्भुत दीप के भूत ने उसको बड़े बड़े चान्दी के थालों में महाराजाओं के योग्य भोजन लाकर दिया। थालों की चान्दी बेचकर अलादीन अमीर होने लगा। वह यह भी जान गया कि गुफा में से जो रत्न वह लाया था, वे बहुमूल्य थे। इतने में राजकुमारी बुदूर को एक दिन देखकर वह उससे प्रेम करने लगा।]

अलादीन जब घर पहुँचा तो उसकी हालत ऐसी थी मानों वह इस दुनियाँ में ही न हो। उसका हुलिया देखकर माँ ने घबराकर

पूछा-"क्यों बेटा, क्या शक्ल बना रखी है! क्या तबियत ठीक नहीं है?"

अलादीन ने माँ को जवाब न दिया। माँ का परोसा हुआ भोजन भी उसने न छुआ।

"बेटा! तुम्हें क्या हो गया है? क्या कोई बीमारी हो गई है? कुछ बताओ तो सही।" माँ ने उसे मनाते हुये पूछा।

"माँ, मुझे न सताओ।" अलादीन ने तङ्ग आकर कहा।

माँ ने भी उसे तब तक न छोड़ा जब तक उसने खाना न खा लिया। फिर वह



बिस्तरे पर पड़ा रात भर न जाने क्या क्या सोचता रहा।

माँ को बेटे का व्यवहार बड़ा विचित्र सा लगा। उसने उससे कई प्रश्न पूछे, कहा कि हकीम को बुलवायेगी। उससे कुछ दिन पहले एक अरबी हकीम नगर में आया हुआ था। राजा भी उससे चिकित्सा करवा रहा था।

"माँ, मैं ठीक हूँ। मुझे कोई बीमारी नहीं है। मैं अब तक सोचता था कि सब त्रियाँ एक जैसी होती हैं। किन्तु कल मैंने राजकुमारी बुदूर को स्नानशाला में देखा। मैं अपनी सुधबुध खो बैठा। उससे जबतक शादी न कर लूँगा तबतक मेरी हालत न सुधरेगी।" अलादीन ने कहा।

यह सुनकर माँ ने सोचा कि हो न हो उसका लड़का पागल होगया है। "ये क्या ऊटपटाङ्ग बातें हैं। क्या तेरी अक्ल मारी गई है? कभी ऐसी बातें न करना।" उसने अपने लड़के को समझाया।

"मुझे कोई पागलपन नहीं है। तु हजार समझा पर मेरा मन न बदलेगा। में राजकुमारी से शादी करके ही रहूँगा। राजा के पास जाकर में साफ़ साफ़ पूछूँगा कि वे अपनी लड़की की शादी मुझ से करते हैं कि नहीं। मैं आगा पीछा नहीं देखूँगा।" अलादीन ने कहा।

"फिर वही बात! मान भी जाओ, बेटा। राजा से इस तरह की बातें सीधे तौर पर नहीं की जाती। कोई जाकर हमारी तरफ से बात करनेवाला तो हो।"

"तुम हो न माँ। तुम्हारे सिवाय मेरा और कौन है? इसलिये तुम जाकर मेरे मन की बात राजा से कहो।" अलादीन ने कहा।

"वाह वाह! क्या तेरी तरह मेरी अक्ल भी मारी गई है? तुम्हारा बाप दर्जी था और मैं उस दर्जी की पत्नी हूँ। राजकुमारी से शादी करने के लिए भला तेरा क्या हक है? वे अपने लड़की की शादी किसी राजा महाराजा से करेंगे। हम कहाँ और वे कहाँ! इन बातों में बराबरी देखी जाती है, बेटा।" माँ ने कहा।

"माँ, मैं वह सब नहीं जानता। कुछ भी हो, मैंने यह शादी करने का पूरा निश्चय कर लिया है। यह निश्चय नहीं बदलेगा। अगर तुम्हें अपने बेटे पर प्रेम है तो मेरे लिये यह करो। क्यों कि अगर मेरी यह इच्छा पूरी न हुई तो मैं अधिक दिन न जीऊँगा। और मैं हूँ भी तेरा इकलौता।" अलादीन ने कहा।

अलादीन की माँ के आखों में आसुँ छलक आये। "हाँ, बेटा, मैं तेरी माँ हूँ और तू मेरा इकलौता लड़का है। मेरी भी तो यह ख्वाइश है कि तेरी शादी हो, और तू भी बालबच्चोंवाला बने। इसलिये हमारी बराबरी के घर में तुम्हारी शादी के बारे में बातचीत करूँगी। तब भी अगर दुल्हन वालों

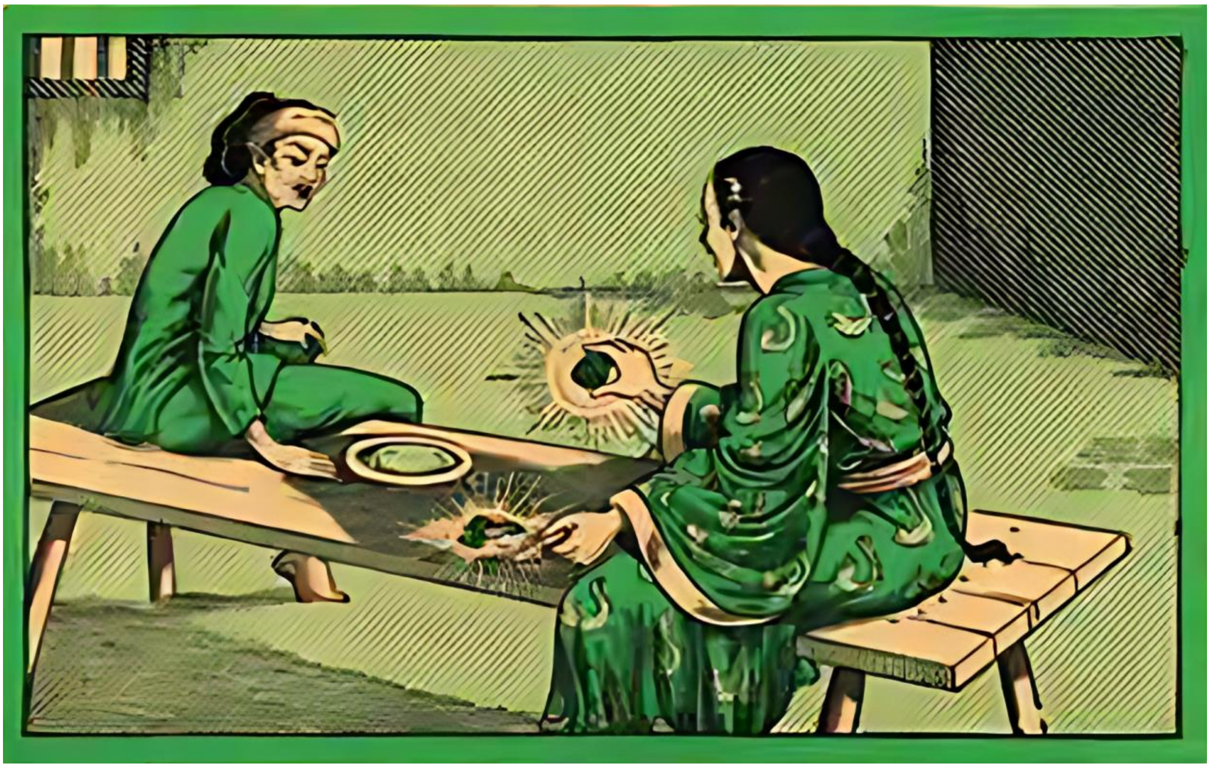


ने पूछा कि तुम्हारा लड़का क्या कर रहा है तो मुझे नहीं मालूम मुझे क्या कहना चाहिये। जब मैं अपने समान के लोगों को ही यह नहीं कह पाती हूँ तो राजा की लड़की को कैसे माँगू, बेटा? कुछ सोचो समझो तो। अगर हमने जाकर कहा भी तो क्या वे हमें जिन्दा रहने देंगे। तुम ही बताओ कि मैं जाकर पूछूँ भी तो कैसे पूछूँ। मैं राजा के सामने कैसे जा सकूँगी? मानों गई भी। उनको कुछ न कुछ नजराना देना होगा न? क्या है? फिर तूने राजा का ऐसा कौन-सा उपकार किया है कि हम उनकी लड़की का हाथ माँगे?"

"तुम ठीक कह रही हो। माँ, तुम पूछ रही हो कि मैंने महाराजा का कौन-सा बड़ा उपकार किया है? मैं उसको बहुमूल्य वस्तु उपहार में दे सकता हूँ। मैं गुफा से जो रत्न लाया था, वे अमूल्य हैं। वैसा एक रत्न भी किसी राजा के पास न होगा। एक थाल ले आ, मैं उन्हें दिखाऊँगा।" अलादीन ने कहा।

रत्नों का प्रकाश देखकर उसकी माँ की आँखें चौधिया गई। "इन्हें ले जाकर महाराजा को नजराना दो और उनके दर्शन करो।" अलादीन ने कहा।

"अच्छा, बेटा, यह तो बहुत बड़ा उपहार है। परन्तु जब वे यह पूछेंगे कि क्या चाहिये नहीं मालूम कि मेरे मुँह से बात निकलेगी कि नहीं। अगर मैं कहूँगी कि आप अपनी लड़की की मेरे लड़के से शादी कीजिये तो शायद वे मुझे वहाँ से बाहर करवा दें। हम दोनों को फाँसी पर चढ़वा दें। फिर भी मैं तेरे लिये सब कुछ करने के लिए तैयार हूँ। पर जब वे पूछेंगे कि तुम्हारा ओहदा क्या है, तुम्हारी जमीन जायदाद कितनी है, तो मैं क्या जवाब दूँ बेटा?" माँ ने पूछा।



इस उपहार को लेकर वे इस तरह के प्रश्न पूछेंगे। अगर पूछें भी तो तेरे मन मैं जो आये, कह देना। सब साबित करने के लिए हमारे पास अद्‌भुत दीप है ही।" अलादीन ने कहा।

अगले दिन, अलादीन की माँ, अद्‌भुत दीप पर भरोसा रखकर राजा का दर्शन करने के लिए तैयार हो गई। रत्नों के थाल पर एक शाल डालकर, वह सवेरे ही राजमहल गई। राजा के दर्शन के लिए तब तक भीड़ न जमा हुई थी। मन्त्रियों व अन्य कर्मचारियों का दरबार हाल में जाना उसको दिखाई दिया। अन्त में राजा आया। सब ने उनका अभिवादन किया। राजा के सिंहासन पर बैठने पर सब यथोचित आसन पर बैठ गये।

पहले शिकायतों की सुनवाई हुई। किन्तु राजा ने समय के अभाव में कई को दर्शन न दिया। और उनसे जाने के लिए कहा। अलादीन की माँ भी इनमें थीं। वह घर चली गई।

जब अलादीन ने उसके हाथ में थाल देखा तो वह समझ गया कि काम पूरा न हुआ था। उसने अन्दर आकर कहा-





"जैसे तैसे में राजदरबार में पहुँची। सच है कि में राजा से बातें न कर सकी। परन्तु कई और मेरी तरह थे, जो उनसे बातें न कर सके। खुदा की मेहरवानी हुई तो कल बात कर सकूँगी।"

अलादीन को पहले तो निराशा हुई। परन्तु माँ की बाद की बातें सुन कर उसका ढाढस बँधा।

अलादीन की माँ अगले दिन गई। पर दरबार हाल बन्द था। दरबार एक दिन छोड़कर, एक दिन लगता था। पर उसने दरबार जाना न छोड़ा। सात दिन बाद राजा ने उसे देखकर मन्त्री से कहा-"मैं इसे रोज देख रहा हूँ। थाल पर शाल डालकर वह जाती है और वहाँ खड़ी हो जाती है। उसको क्या काम है?"

"महाप्रभु, स्त्रियाँ तो कम अक्ल की होती हैं। वह अपने पति के या किसी और रिश्तेदार के खिलाफ शिकायत करने आयी होगी।" मन्त्री ने कहा।

"इस बार जब वह आये तो मेरे सामने हाजिर करो।" राजा ने कहा।

अगले दिन अलादीन की माँ दरबार में गई। राजा ने उसको बुलाकर कहा-"तुमको बहुत दिनों से देख रहा हूँ। तुमने कभी सामने आकर मुझ से कुछ न कहा। तुम मुझ से क्या चाहती हो?"

अलादीन की माँ ने राजा को झुककर सलाम किया-"महाप्रभु, अगर मैं कोई खता कर बैठूँ तो मुझे सजा नहीं देंगे, यह अभयदान पहले मेहरबानी करके दीजिये।" राजा ने हँसकर कहा-"तुम न डरो। दरबार खतम होने दो। फिर तुम्हारी फरियाद सुनूँगा।"

दरवार खतम हुआ। राजा और मन्त्री के अतिरिक्त सब चले गये। राजा ने

अलादीन की माँ से पूछा-"क्या चाहती हो?"

"अलादीन नाम का मेरा एक लड़का है। उसने एक दिन राजकुमारी को स्नानागार में किवाड़ के पीछे से देखा। तब से वह उससे प्रेम करने लगा। अगर उससे शादी न हुई तो वह मर जायेगा।" अलादीन की माँ ने कहा।

राजा ने हँसकर पूछा-"उस शाल के नीचे क्या है?" अलादीन की माँ ने थाल हटाकर थाल में रखे रत्नों को, राजा को दिया। उनको देखकर राजा के मुख से बात न निकली। आखिर उसने कहा-"मैंने कभी इतने बड़े रत्न नहीं देखे हैं। मन्त्री! क्या तुमने कभी देखे हैं?"

"नहीं महाराज" मन्त्री ने कहा।

"इस तरह के रत्न भेजनेवाला मेरी लड़की से शादी करने के योग्य नहीं है क्या?" राजा ने पूछा।

मन्त्री कोई जवाब न दे पाया। वह हिचकिचाया। "महाराज! पहले आपने वचन दे रखा है कि आप अपनी लड़की का मेरे लड़के के साथ विवाह करेंगे। अगर आप मेरे लड़के को तीन महीना का समय दें



तो वह इससे भी बड़े रत्न लाकर आपको उपहार में देगा।" मन्त्री ने कहा।

राजा जानता था कि तीन महीने नहीं, अगर तीस साल भी दिये गये तो मन्त्री का लड़का बैसे रत्न नहीं ला सकता था।

तो भी उसने मन्त्री की इच्छा के अनुसार तीन महीने की अवधि दे दी।

फिर राजा ने अलादीन की माँ की ओर मुड़कर कहा-"अपने लड़के से कहना की मैं उसको अपना दामाद बना

लूँगा। पर कहना कि तीन महीने तक शादी नहीं हो सकती। क्योंकि शादी की तैयारी के लिये समय चाहिये।"

अलादीन की माँ राजा को धन्यवाद देकर घर चली गयी। उसको मुस्कुराता देख अलादीन के मन में आशायें उठने लगी। "बेटा, राजा ने अपनी लड़की देना स्वीकार कर लिया है। परन्तु मन्त्री ने उनके कान में कुछ कहा। उसके बाद राजा ने विवाह तीन महीने के लिये स्थगित कर दिया। मुझे शक हो रहा है कि मन्त्री विवाह भङ्ग करने के लिये कोई साजिश कर रहा है।" अलादीन की माँ ने कहा। अलादीन बड़ा खुश हुआ। तीन महीने की अवधि की उसे परवाह न थी। "माँ, तुमने मरते को जिलाया है।" कहते हुये उसने माँ को खुशी खुशी आलिङ्गन किया।

एक एक दिन गिनते हुये अलादीन ने दो महीने गुजारे। उसके बाद एक दिन उसकी माँ तेल के लिये बाज़ार गयी। उसको बाजार देखते ही अचरज हुआ। दुकानें सब बन्द हो गई थी। गलियाँ सजाई गई थीं। तोरण बाँधे गये थे। दिये जलाये जा रहे थे। "यह सब किस लिये?" अलादीन की माँ ने तेल की दुकानवाले से पूछा।

"क्या तुम नहीं जानते आज रात को मन्त्री के लड़के की बुदूर से शादी हो रही है। सारे शहर में जलसे हो रहे हैं।" तेल की दुकानवाले ने कहा।

यह सुनते ही अलादीन की माँ पागल-सी हो गई। यह दुःख खबरी कैसे लड़के को सुनाई जाय, यह सोचती वह घर गई।

(अभी और है)





मेंढ़क की चाल

भालू को मेण्ढक पर बड़ा गुस्सा आया। उसने सोचा कि जब वह खरगोश का पीछा कर रहा था तो मेण्ढक ने ही उसे गलत रास्ता बताकर धोखा दिया था। उसने उससे बदला लेने की ठानी।

बदला लेने का मौका भी उसे जल्दी मिल गया। एक सप्ताह होने से पहिले मेण्ढक उसे तलैय्या के किनारे सोता दिखाई दिया।

भालू ने अपने हाथ की कुल्हाड़ी नीचे रखी, पीछे जाकर उसने मेण्ढक को अपने पञ्जे से पकड़ लिया।

मेण्ढक, नींद से उठा और सामने भालू को पा बड़ा चकित हुआ।

"क्यों मेण्ढक, हाल-चाल ठीक है न? बाल-बच्चे सब अच्छे हैं न? अफसोस, अब तुम उन्हें न देख पाओगे।" भालू ने कहा।

मेण्ढक न जान सका कि भालू को उस पर क्यों गुस्सा आया था। उसने पूछा-"भालू मामा! क्यों ऐसी बातें कर रहे हो?"

"जब तुमने मुझे देखकर, हँसी मजाक किया था। अगर तुम तब आगे की सोचते तो अच्छा होता। अब क्यों बिचारी-सी शक्ल बनाते हो?" भालू ने आँखें दिखाते हुए पूछा।

मेण्ढक को न भालू की बातें समझ में आई न उसके कहने का तरीका ही।

"मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है?" उसने सविनय पूछा।

"क्या तूने नहीं बताया था कि खरगोश उस तरफ गया है? तुम मुझसे मखौल करते हो? शायद सोचते थे कि बचकर निकल जाओगे। तुम

श्री सुमन कुमार जोशी

शायद मेरी बात नहीं जानते।" भालू ने कहा।

तब भी मेण्ढक को भालू की बातें समझ में न आई। पर यह बात वह जान गया कि भालू उसको मारकर ही रहेगा। इसलिए मेण्ढक ने वह गलती स्वीकार कर ली, जो उसने न की थी-"मामा! इस बार माफ कर दो। फिर ऐसी गलती कभी न करूँगा मामा!" वह भालू को मनाने लगा। भालू ने गुस्से में दाँत पीसे। "इस बार तुमने अगर मुझे छोड़ दिया तो तुम्हें मैं बहुत बड़ा शहद का छत्ता दिखाऊँगा, मामा" मेण्ढक ने कहा।

भालू को दया न आई। वह यह सोचने लगा कि मेण्ढक को कैसे मारा जाये। वह पानी में मर नहीं सकता था। आग में डालने से मर तो सकता था पर भालू के पास आग न थी।

भालू की फिक्र मेण्ढक समझ गया। उसने रोना छोड़कर कहा-"मामा। तुमने मुझे मारने का निश्चय किया है। कम से कम मुझे वैसे तो मारो जैसे में मरना चाहता हूँ। वह देखो, उस धोबी के पत्थर पर मुझे रखकर अपनी कुल्हाड़ी से मार दो दलदल में अपने लोगों को देखता, में इस दुनियाँ से चला जाऊँगा।"

भालू को भी यह तरीका जँचा। वह मेण्ढक को पत्थर पर ले गया। मेण्ढक इधर उधर देखने लगा, जैसे अपने रिश्तेदारों की तलाश कर रहा हो। तब भालू ने अपनी कुल्हाड़ी उठा रखी थी। उसने जोर से कुल्हाड़ी मारी।

कुल्हाड़ी के पढ़ने से पहले मेण्ढक एक छलाङ्ग में दलदल के बीचों बीच कूदा। पत्थर से लगकर भालू की कुल्हाड़ी खुण्डी हो गई।



CHANDAMAMA (Hindi) JANUARY 1956 Regd. No. M. 5452



रूपधर की यात्राएँ